खंड

4

नीतिशतकम्

इकाई 12
भर्तृहरि का परिचय 65

इकाई 13
नीतिशतकम् (श्लोक 1 -10) 79

इकाई 14
नीतिशतकम् (श्लोक 11 -20) 92

खंड 4 का परिचय

संस्कृत पद्य-साहित्य पाठ्यक्रम का यह चतुर्थ खण्ड है। इस खण्ड में तीन इकाइयाँ हैं। इस खंड की सभी इकाइयाँ 'नीतिशतकम्' नामक मुक्तक काव्य से सम्बन्धित हैं। भर्तृहरि मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि हैं। 'मुक्तकं श्लोक एकैकश्चमत्कारक्षमं सताम्' मुक्तक काव्य के इस लक्षण का अनुसरण कर भर्तृहरि ने शतकत्रय की रचना की। शतकत्रय के अन्तर्गत नीतिशतक, शृंगारशतक और वैराग्यशतक की गणना की जाती है। इस खंड में आप भर्तृहरि का संक्षिप्त जीवन-वृत्त, उनका सामाजिक अनुभव तथा शतकत्रय का परिचय प्राप्त करेंगे। नीतिशतक में नीति सम्बन्धी श्लोक हैं। इस खंड में आप नीतिशतक ग्रन्थ के प्रारम्भिक 20 श्लोकों का अन्वय, अनुवाद और व्याख्या का अध्ययन करेंगे।

तकनीकी और कठिन शब्दों को स्पष्ट करने के लिये प्रत्येक इकाई में आवश्यक शब्दावली दी गयी है। साथ ही अध्ययन में सहायक उपयोगी पुस्तकों की सूची प्रत्येक इकाई के अन्त में दी गयी है। इन पुस्तकों के सहयोग से आप सम्बन्धित विषय का और अधिक अध्ययन कर सकते हैं।

शुभकामनाओं के साथ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 भर्तृहरि का परिचय

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 भर्तृहरि का परिचय

12.3 भर्तृहरि का सामाजिक अनुभव

12.4 शतकत्रय का परिचय

- 12.4.1 नीतिशतक
- 12.4.2 शृंगारशतक
- 12.4.3 वैराग्यशतक

12.5 नीतिशतक का प्रतिपाद्य

12.6 सारांश

12.7 शब्दावली

12.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- भर्तृहरि के जीवन-परिचय से परिचित हो जायेंगे।
- भर्तृहरि की काव्य-शैली से परिचित हो जायेंगे।
- भर्तृहरि द्वारा रचित ग्रन्थों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे, विशेषकर नीतिशतक के प्रतिपाद्य विषय का विस्तार से ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- भर्तृहरि का संस्कृत-साहित्य में महत्त्व तथा इनके योगदान से परिचित हो सकेंगे।
- आप संस्कृत भाषा की शब्दावली स्मरण कर पायेंगे।

12.1 प्रस्तावना

इकाई संख्या 12 संस्कृत पद्य-साहित्य के अन्तर्गत आती है। इसके अन्तर्गत भर्तृहरि का परिचय दिया गया है।

विश्व में संस्कृत काव्यशास्त्र की एक समृद्ध परम्परा है। यह मुख्यतः द्विविधरूप से विभाज्य है– गद्य और पद्य। पद्य परम्परा के अनेक विभाग-प्रविभाग हैं, जिसमें से एक गीतिकाव्य है, गीतिकाव्य का एक उपभेद मुक्तक काव्य है। भर्तृहरि को मुक्तक काव्य परम्परा के अग्रणी कवि के रूप में सर्वसम्मति से स्थापित किया गया है। इन्होंने शतकत्रय अर्थात् नीतिशतक, शृंगारशतक तथा वैराग्यशतक नामक मुक्तक काव्य की रचना की है। अतः इस इकाई में भर्तृहरि का परिचय, उनकी काव्यशैली, शतकत्रय का परिचय तथा वैशिष्ट्य का अध्ययन

किया जायेगा, जिसके माध्यम से सम्पूर्ण संस्कृत काव्यशास्त्र में भर्तृहरि के योगदान को समझने में सरलता होगी।

12.2 भर्तृहरि का परिचय

भारतीय संस्कृत साहित्य में भर्तृहरि एक महत्त्वपूर्ण कवि के रूप में स्थापित हैं। अपने गीतिकाव्य के माध्यम से रससिद्ध कवीश्वरों के मध्य में इन्होंने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। विद्वानों ने इन्हें महाकवि और महाविद्वान् बताया है। इनके विषय में एक अज्ञातकर्तृक श्लोक इस प्रकार है–

महान्तः कवयः सन्तु महान्तः पण्डितास्तथा।
महाकविर्महाविद्वान् एको भर्तृहरिर्मतः।।

इनके द्वारा रचित काव्य-श्लोकों का स्पष्ट प्रभाव इनके परवर्ती अनेक कवियों पर दृष्टिगोचर होता है। कालिदास जैसे महान् कवि भी भर्तृहरि की रचनाओं से प्रभावित हैं। अभिज्ञानशाकुन्तलम् का 'भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः' नामक श्लोक इसका स्पष्ट उदाहरण है, जो कि मूलतः भर्तृहरि के नीतिशतक का श्लोक है। विशाखदत्त का मुद्राराक्षस, केशवमिश्र का अलंकारशेखर, रुय्यक का अलंकारसर्वस्व, क्षेमेन्द्र का औचित्यविचारचर्चा, कविकण्ठाभरण और सुवृत्ततिलक, मम्मट का काव्यप्रकाश, गोविन्द का कार्यप्रदीप, वाग्भट्ट का काव्यानुशासन, भोजराज का सरस्वतीकण्ठाभरण आदि ग्रन्थों में भर्तृहरि के श्लोकों का स्पष्ट प्रभाव दिखायी देता है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भर्तृहरि के जीवन के विषय में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है। अन्य प्राचीन भारतीय विद्वानों के सदृश ही इन्होंने स्वयं के विषय में कोई विशेष जानकारी नहीं दी है। आधुनिक काल के संस्कृत साहित्य के इतिहास के विद्वानों ने इनके जीवन के विषय में जो कुछ भी निष्कर्ष निकाला है, उसका आधार अधिकांशतः किंवदन्तियां और दन्तकथाएं हैं। यही कारण है कि इनके माता-पिता, जन्मकाल और कर्तृत्व के विषय में एकमत स्थापित नहीं हो पाया है।

भर्तृहरि के जीवनवृत्त के विषय में प्रसिद्ध कुछ किंवदन्तियां इस प्रकार हैं–

1. एक जनकथा के अनुसार महाकवि भर्तृहरि के पिता का नाम वीरसेन था। वे गन्धर्व जाति के थे तथा इनकी चार सन्तानें थीं– भर्तृहरि, विक्रमादित्य, सुभटवीर्य तथा मेनावती।

2. एक दन्तकथा के अनुसार भर्तृहरि की पत्नी का नाम पद्माक्षी था तथा वह मगध के राजा सिंहसेन की पुत्री थीं।

3. अन्य कथा के अनुसार भर्तृहरि की पत्नी का नाम अनंगसेना था।

4. अन्य जनश्रुति के अनुसार भर्तृहरि की माता का नाम सुशीला देवी था, जो जम्बूद्वीप के राजा की एकमात्र सन्तान थीं, अन्य कोई सन्तान नहीं थी। अतः सुशीला देवी के पिता अर्थात् भर्तृहरि के नाना ने अपना सम्पूर्ण राज्य भर्तृहरि को सौंप दिया था। राजा भर्तृहरि ने उज्जयिनी को अपने राज्य की राजधानी बनाया। बाद में राजा भर्तृहरि ने विक्रमादित्य को राजसिंहासन का दायित्व देकर सुभटवीर्य को राज्य का सेनापति बनाया।

5. एक अन्य कथा के अनुसार भर्तृहरि उज्जयिनी के राजवंश से सम्बन्ध रखते हैं और यह राजा विक्रमादित्य, जो कि विक्रम संवत् के प्रवर्तक माने जाते हैं, इनके ज्येष्ठ

भ्राता थे। अतः राजा बनने के अधिकारी भर्तृहरि थे। पिंगला नाम की इनकी एक रानी थी, जिसकी स्वामी-भक्ति पर इन्हें अटूट विश्वास था, किन्तु पिंगला की दुश्चरिता की घटना के कारण भर्तृहरि की संसार से विरक्ति हो गयी थी और इन्होंने अपना राज्य अपने कनिष्ठ भ्राता को प्रदान कर वैराग्य ले लिया।

6. इन सब दन्तकथाओं से बिल्कुल भिन्न कथा शेषगिरिशास्त्री के द्वारा कथित है। शेषगिरिशास्त्री के अनुसार राजा विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त नाम के एक ब्राह्मण के पुत्र थे। चन्द्रगुप्त ने चार विवाह किये थे इनकी पत्नियों के नाम क्रम से इस प्रकार हैं– ब्राह्मणी, भानुमती, भाग्यवती एवं सिन्धुमती। ये चारों रानियाँ क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिया, वैश्या तथा शूद्र थीं। इन चारों ने एक-एक पुत्र को जन्म दिया था, जिनका नाम क्रम से इस प्रकार था– वररुचि, विक्रमार्क, भट्टि तथा भर्तृहरि। इनमें से विक्रमार्क राजा बने एवं भट्टि इनके मन्त्री थे।

7. चीनी यात्री इत्सिंग ने भी एक किंवदन्ती का उल्लेख किया है कि भर्तृहरि ने सात बार गृहत्याग किया और पुनः गृहस्थ बने और अन्त में यह बौद्ध बने। किन्तु इनके बौद्ध होने को अधिकांश विद्वानों ने अस्वीकार कर दिया।

इस प्रकार इन किंवदन्तियों एवं जनश्रुतियों से इतना स्पष्ट है कि भर्तृहरि किसी राजवंश से अवश्य सम्बन्ध रखते थे तथा इनके भ्राता का नाम विक्रमादित्य तथा स्त्री का नाम पिंगला था। भर्तृहरि स्त्रियों के प्रति किसी भी प्रकार की श्रद्धा नहीं रखते थे, उनके अनुसार स्त्रियाँ अनेक प्रकार के दुर्गुणों से युक्त होती हैं, अतः इनके प्रति आसक्ति मनुष्य को नाश की ओर अग्रसारित करती हैं। यह भोग-विलास का प्रतीकात्मक स्वरूप है। अतः इनके प्रति वैराग्यभाव रखना ही कल्याणकारी है। अपने इसी मनोभाव को इन्होंने वैराग्यशतकम् नामक ग्रन्थ में पिरोया है। नीतिशतक में भी भर्तृहरि ने अपनी स्त्री को दुश्चरिता कहा है–

यां चिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता
साप्यन्यमिच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः।
अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च।।

(नीतिशतक–2)

बलदेव उपाध्याय के अनुसार यह शैव या वेदान्तोपासक थे, इसकी पुष्टि इनके दो ग्रन्थों नीतिशतक एवं वाक्यपदीयम् के मंगलाचरण से होती है। महाभाष्य टीका के पर्यनुशीलन से भी इस बात की पुष्टि हो जाती है, कि यह वैदिक धर्मी थे ।

जिस प्रकार इनके माता-पिता, परिवार, कुल के विषय में संशय की स्थिति है, उसी प्रकार इनके नाम, व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व के विषय में भी संशय है। आधुनिक विद्वानों में यह संशय है कि संस्कृत ज्ञान परम्परा में भर्तृहरि नाम के एक ही विद्वान् थे अथवा दो विद्वान् हुए। क्या वाक्यपदीयम् नामक व्याकरणदर्शन का ग्रन्थ तथा शतकत्रय नामक गीतिकाव्य के ग्रन्थ के रचनाकार एक ही भर्तृहरि हैं, अथवा यह दोनों अलग-अलग व्यक्ति हैं? यदि अलग-अलग व्यक्ति हैं, तो इनका काल-निर्धारण भी अलग-अलग होना चाहिये। ज्ञात हो कि व्याकरणशास्त्र में महाभाष्यकार पतंजलि के पश्चात् सर्वाधिक प्रामाणिक आचार्य भर्तृहरि ही माने जाते हैं। इन्होंने बीजरूप में उपस्थित व्याकरण दर्शन को एक समग्र दर्शन बनाया। कीथ आदि पाश्चात्य विद्वानों ने दोनों भर्तृहरि को अभिन्न व्यक्ति माना है। इन्हें एक ही व्यक्ति मानने के कारणरूप में एक तर्क यह भी दिया जाता है कि नीतिशतक के मंगलाचरण में उद्धृत परब्रह्म तथा वाक्यपदीयम् के शब्दब्रह्म के स्वरूप में एकता दिखायी देती है। अतः सम्भवतः इन दोनों का रचनाकार एक ही व्यक्ति है। किन्तु भारतीय विद्वान् जैसे बलदेव उपाध्याय ने

अपने ग्रन्थ 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' में महावैयाकरण भर्तृहरि और महाकवि भर्तृहरि को एक ही व्यक्ति के रूप में नहीं स्वीकार किया है। युधिष्ठिर मीमांसक, जिन्होंने संस्कृत व्याकरणशास्त्र के इतिहास पर सर्वाधिक प्रमाणिक ग्रन्थ की रचना की है, उन्होंने भी कृतियों की विषय-वस्तु की विभिन्नता के आधार पर तीन भर्तृहरि के होने की सम्भावना प्रकट की है। युधिष्ठिर मीमांसक के अनुसार यह कृतियाँ इस प्रकार हैं–

1. महाभाष्य-दीपिका
2. वाक्यपदीय-तीन खण्ड
3. वाक्यपदीय की स्वोपज्ञ वृत्ति-प्रथम और द्वितीय काण्ड
4. नीतिशतक, श्रृंगारशतक और वैराग्यशतक
5. जैमिनीय मीमांसा वृत्ति
6. वेदान्तसूत्रवृत्ति
7. शब्दधातुसमीक्षा
8. भट्टिकाव्य
9. भागवृत्ति

इनमें से प्रथम तीन ग्रन्थ व्याकरणशास्त्र से सम्बन्धित हैं, अन्य गीतिकाव्य, मीमांसा-दर्शन, वेदान्तदर्शन इत्यादि से सम्बन्धित हैं। अतः भर्तृहरि एक ही व्यक्ति हैं, या एक से ज्यादा, इस विषय में विद्वानों के मध्य एकमत स्थापित नहीं हो पाया है। परिणामतः इनके काल के सम्बन्ध में भी विवाद है। उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' ने संस्कृत साहित्य का इतिहास में इनका समय 400 ई. से 600 ई. के बीच का माना है। किन्तु अधिकांश विद्वान् इनका समय छठीं शताब्दी के अन्त का मानते हैं और समस्या यह है कि कुछ विद्वान् इनका काल-निर्धारण एक ही भर्तृहरि मानकर करते हैं और कुछ इन्हें वैयाकरणशास्त्री से अलग मानकर करते हैं। अतः इनके जन्म-काल को लेकर इस प्रकार के मत हैं–

1. चीनी यात्री इत्सिंग के यात्राविवरण से यह स्पष्ट होता है कि भर्तृहरि नाम के वैयाकरण की मृत्यु 659 ईस्वी में हुई थी।
2. वाक्यपदीयम् के भर्तृहरि से एकता स्थापित करने पर इनका काल ७वीं शताब्दी से पूर्व का मानेंगे।
3. जनश्रुतियों में भर्तृहरि राजा विक्रमादित्य के ज्येष्ठ भ्राता माने जाते हैं। ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार विक्रमादित्य ने 644 ई. में कहरुर की लडाई में हूणों को पराजित किया था, अतः भर्तृहरि भी इसी काल के रहे होगें।
4. विद्वानों के अनुसार भारतीय कवि अमरुक की रचना अमरुकशतक भर्तृहरि के श्रृंगारशतक से विशेषरुप से प्रभावित है, अमरुकशतक में इसके पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। अमरुक का काल लगभग 650 ई. से 750 ई. के मध्य माना जाता है, अवश्य ही भर्तृहरि का काल इनके पूर्व रहा होगा, इस आधार पर भर्तृहरि का जन्मकाल ६वीं शताब्दी का उत्तरार्ध माना जा सकता है।

5. इस मत से बिल्कुल भिन्न एक मत विद्वानों का यह भी है कि इनका काल ई.पू. प्रथम शताब्दी है, इस मत के समर्थक विद्वान् भर्तृहरि को कालिदास के समकालीन मानते हैं। कालिदास का समय ई.पू. प्रथम शताब्दी माना जाता है। भर्तृहरि द्वारा रचित श्लोक अनेक कवियों के ग्रन्थों में प्राप्त हैं, जिनमे से कालिदास का अभिज्ञानशाकुन्तलम् भी है। नीतिशतक का 'भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः' नामक श्लोक अभिज्ञानशाकुन्तलम् में उद्धृत है। स्पष्ट है कि कालिदास कुछ अंश तक अवश्य ही भर्तृहरि के काव्य से प्रभावित रहे होंगे तथा कालिदास राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक माने जाते हैं, विक्रमादित्य भर्तृहरि के कनिष्ठ भ्राता माने जाते हैं, अतः इस आधार पर भर्तृहरि कालिदास के समकालीन अथवा इनके कुछ काल पूर्व ही रहे होंगे। अतः इस मत के अनुसार ई.पू. प्रथम शताब्दी के आस-पास का समय भर्तृहरि का होना चाहिये।

युधिष्ठिर मीमांसक ने भर्तृहरि के द्वारा रचित ग्रन्थों का उल्लेख किया है, इसकी सूची पूर्व के पृष्ठ में प्राप्त हो चुकी है। इन ग्रन्थों में से 'वाक्यपदीयम्' तथा 'सुभाषितत्रिशती' अपनी विषयवस्तु की महत्ता के कारण प्रसिद्ध है। वाक्यपदीयम् व्याकरण दर्शन का मुकुट शिरोमणि है एवं शतकत्रय संस्कृत काव्य जगत् के मुक्तक काव्यों का एक अनुपम उदाहरण है। भर्तृहरि ने शृंगारशतक के 99वें और 100वें श्लोक में मनुष्य के त्रिविध स्वभाव के विषय में स्पष्टतः संकेत दिया है। द्रष्टव्य है–

वैराग्ये सञ्चरत्येको नीतौ भ्रमति चापरः।
शृङ्गारे रमते कश्चिद्भुवि भेदाः परस्परम्।।
यद्यस्य नास्ति रुचिरं तस्मिंस्तस्याऽस्पृहा मनोज्ञेऽपि।
रमणीयेऽपि सुधांशौ न मनः कामः सरोजिन्याः।।

(शृंगारशतक–99,100)

कवि के अनुसार मनुष्य वैराग्य, नीति या फिर शृंगार में से किसी एक पर आश्रित रहकर अपना जीवन-यापन करता है। अतः वह अपनी रुचि के अनुसार अपने लिये किसी एक मार्ग का चयन कर सकता है। सम्भवतः इसी दृष्टि को आधार बनाकर कवि ने तीनों शतकों की रचना की। भर्तृहरि के शतकों के नाम से इनकी विषय-वस्तु का भान हो जाता है। नीतिशतक में मनुष्य-जीवन की सार्थकता हेतु नीतियों का विवेचन, शृंगारशतक में शृंगार एवं वैराग्यशतक में वैराग्य का वर्णन है।

12.3 भर्तृहरि का सामाजिक अनुभव

भर्तृहरि के सामाजिक अनुभव के अन्तर्गत नीतिपरक सिद्धान्त, आध्यात्मिक सिद्धान्त, राजनैतिक सिद्धान्त आदि हैं, जो मनुष्य को सार्थक जीवन व्यतीत करने के लिये उच्चकोटीय दृष्टि प्रदान करते हैं। इन्होंने स्वयं भोगमय और त्यागमय जीवन का अनुभव प्राप्त किया है, अतः ये दोनों ही मार्गों के परिणाम से पूर्णरूपेण परिचित हैं। कवि दोनों मार्गों में से किसी एक मार्ग का चयन करने का परामर्श देते हैं। भर्तृहरि का यह प्रबल विश्वास है कि मनुष्य दैव (भाग्य) और कर्म दोनों के अधीन है। किन्तु भाग्य और कर्म में कर्म की ही प्रधानता है। कर्म ही हमारे कर्मफल को सुनिश्चित करते हैं। कवि कहते हैं–

नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं
विद्यापि नैव न च यत्नकृतापि सेवा।

भाग्यानि पूर्वतपसा खलु सञ्चितानि
काले फलन्ति पुरुषस्य यथैव वृक्षाः।।

(नीतिशतक–97)

सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की एकसमान रूप से स्वीकृति है। अतः कवि ने वैराग्य के साथ-साथ अर्थ (धन) की भी महत्ता बतायी है। सामाजिक व्यक्ति के लिये धनवान् होना भी आवश्यक होता है, क्योंकि धनी व्यक्ति ही समाज में कुलीन, गुणज्ञ, वक्ता और दर्शनयोग्य होता है।

भर्तृहरि ने स्त्रियों के स्वाभाविक और औपाधिक गुणों के विषय में तो एक सम्पूर्ण शतक की रचना कर डाली है। यद्यपि स्त्रियों के विषय में उनका दृष्टिकोण पक्षपातपूर्ण दिखता है, सम्भवतः इसका कारण इनके व्यक्तिगत अनुभव हैं। इन्होंने स्वयं अपनी स्त्री के विश्वासघात का शृंगारशतक में वर्णन किया है। इनके अनुसार स्त्री अबला नहीं अपितु सबला है, क्योंकि समस्त पुरुष उसके शारीरिक सौन्दर्य, यौवन, कुटिलता इत्यादि के सम्मुख नतमस्तक हो जाते हैं। कवि के समय में वेश्याओं को भी सामाजिक मान्यता प्राप्त थी, यद्यपि उनसे भी दूर रहना ही पुरुषों के लिये श्रेयस्कर माना जाता रहा है। इनके शतकों से यह स्पष्ट होता है कि भर्तृहरिकालीन समाज में विद्वानों का बहुत महत्त्व है। राजा भी विद्वानों की अवहेलना नहीं कर सकता है। विद्वान् सदैव समाज में श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त होता है। विपत्ति में धैर्य, ऐश्वर्य में क्षमा, सदन में वाक्पटुता, स्वयश में रुचि और शास्त्र में व्यसन–यह सब श्रेष्ठ पुरुष रूप विद्वान् के लक्षण होते हैं। विद्वानों के विषय में लिखते हुए इन्होंने राजा में रहने वाले कई स्वाभाविक गुणों पर प्रकाश डाला है। इस प्रकार भर्तृहरि के शतकों के माध्यम से इनके सामाजिक अनुभव का ज्ञान प्राप्त होता है।

बोध प्रश्न 1

1. **निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिह्न लगाइये।**

   (i) कविकण्ठाभरण के प्रणेता हैं – भर्तृहरि/क्षेमेन्द्र

   (ii) भर्तृहरि को शैव या वेदान्तोपासक मानते हैं – बलदेव उपाध्याय/डॉ. विश्वेश्वर

   (iii) नीतिशतक के मंगलाचरण में स्तुति है – कृष्ण/परब्रह्म

   (iv) 'महाभाष्यदीपिका' ग्रन्थ सम्बन्धित है – मीमांसादर्शन/व्याकरणशास्त्र

   (v) भर्तृहरि की माता का नाम है– सुशीला देवी/मामल्ल देवी

2. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये–**

   (i) ..... ने भर्तृहरि के द्वारा रचित ग्रन्थों की सूची का उल्लेख किया है।
   (युधिष्ठिर मीमांसक/कुमारिलभट्ट)

   (ii) भर्तृहरि ने अपनी स्त्री के विश्वासघात का वर्णन ..... में किया है।
   (वैराग्यशतक/शृंगारशतक)

   (iii) भर्तृहरि के पिता का नाम .....है। (वीरसेन/भीमसेन)

   (iv) अमरुशतक के प्रणेता .....हैं। (भर्तृहरि/अमरुक)

अभ्यास प्रश्न 1

1. भर्तृहरि के जीवन-वृत्त पर प्रकाश डालिये।

12.4 शतकत्रय का परिचय

संस्कृत काव्य-क्षेत्र दो भागों मे विभक्त है– दृश्य-काव्य और श्रव्य-काव्य। श्रव्य काव्य के तीन उपभेद हैं–पद्य, गद्य और चम्पू। पद्य काव्य के भी तीन उपभेद हैं– महाकाव्य, खण्डकाव्य और गीतिकाव्य। गीतिकाव्य के अन्तर्गत मुक्तक काव्य आते हैं और मुक्तक काव्य की मुख्य विशेषता यह होती है कि इसमें एक ही पद्य में या तो किसी एक रस की पूर्ण अभिव्यक्ति होती है या किसी अत्यन्त उपयोगी विषय का वर्णन रहता है। अग्निपुराण में मुक्तक काव्य का लक्षण इस प्रकार है– **मुक्तकं श्लोक एकैकंचमत्कारक्षमं सताम्** अर्थात् मुक्तक काव्य में प्रत्येक श्लोक स्वतन्त्र रूप से अपने सम्पूर्ण अर्थ का प्रकाशन करते हुए सहृदय में चमत्कार उत्पन्न करता है। इस दृष्टिकोण से भर्तृहरिकृत नीतिशतक अन्य मुक्तकों की तुलना में श्रेष्ठ है। ध्यातव्य है कि साहित्यसंगीतकलाविहीनः आदि प्रसिद्ध श्लोक नीतिशास्त्र में ही कहा गया है।

नीतिशतक में १११, श्रृंगारशतक में १०३ और वैराग्यशतक में १११ श्लोक हैं। शतकों की शैली प्रसादयुक्त है, जिसमें माधुर्य, पदलालित्य एवं भावप्रवणता है। भाषा भी सरल, प्रवाहपूर्ण, परिष्कृत एवं प्रांजल है। इनकी भाषा अत्यन्त स्वाभाविक है, जिसके कारण पद्य को पढकर स्वतः उसका भावार्थ स्पष्ट हो जाता है। कवि का भाव एवं प्रत्येक शतक में प्रयोग की हुई भाषा का अद्भुत सामंजस्य ही कवि की मुख्य विशेषता है। वैदर्भी रीति में इन्होंने अपने भावों को अभिव्यक्त किया है। इनके काव्य में दीर्घ समासों का प्रयोग नगण्य है। छन्दों और अलंकारो का प्रयोग भी सावधानी के साथ किया गया है। छन्दों में शिखरिणी, उपजाति, स्रग्धरा, वसन्ततिलका का प्रयोग बहुलता के साथ है। शार्दूलविक्रीडित इनका सबसे प्रिय छन्द प्रतीत होता है। अलंकारों में उपमा, रूपक, दृष्टान्त, स्वभावोक्ति और अतिशयोक्ति की प्रचुरता है। भाषागत और काव्यगत विशेषता के अतिरिक्त भर्तृहरि की और अन्य मुख्य विशेषता है–पद्य और वाक्यांश के रूप में सुभाषितों, लोकोक्तियों के द्वारा मानव-जीवन के आदर्श को प्रस्तुत करना। इन सुभाषितों एवं लोकोक्तियों के माध्यम से कवि ने जो भी समाज तक पहुंचाने का प्रयत्न किया है, उसमें वह पूर्णतया सफल हुए हैं और यही लोकोक्तियां कवि को वर्तमान में भी प्रासंगिक बनाये रखती हैं। इनकी लोकोक्तियां मनुष्य जीवन के सर्वांगीण विकास का संकेत देती हैं। व्यावहारिक तथा सांसारिक पक्ष से प्रारम्भ करके आध्यात्मिकता की ओर ले जाने में प्रेरणा प्रदान करती हैं। तीनों शतकों में लिखी गई लोकोक्तियां तथा सुभाषित में से कुछ प्रमुख का विवरण संक्षेप में इस प्रकार है–

नीतिशतक के सुभाषित वाक्य–विभूषणं मौनमपण्डितानाम् (श्लोक ७), न हि गणयति क्षुद्रो जन्तुः परिग्रहफल्गुताम् (श्लोक ६), विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः (श्लोक १०), मूर्खस्य नास्त्यौषधम् (श्लोक ११), सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम् (श्लोक २३), सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः (श्लोक ५८), दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना छायेव मैत्री खलसज्जनानाम् (श्लोक ६०), न निश्चितार्थाद्विरमन्ति धीराः (श्लोक ८१) इत्यादि। इसके अतिरिक्त नीतिशतक की कुछ अन्य प्रमुख सूक्तियां इस प्रकार हैं– अवस्था वस्तूनि प्रथयति संकोचयति च। कुत्स्याः स्युः कुपरीक्षका न मणयो यैरर्घतः पातिताः। न्यायात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः। भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः। मूर्खस्य नास्त्यौषधम्। वाग्भूषणं भूषणम्। विद्याविहीनः पशुः। शीलं परं भूषणम् इत्यादि।

शृंगारशतक के सुभाषित वाक्य– किमिहं न हि रम्यं मृगदृशः (श्लोक ६), कं न वशं कुरुते भुवि रामा (श्लोक ६), पुण्यैर्विना न हि भवन्ति समीहितार्थाः (श्लोक १७), विपदि हन्त सुधापि विषायते (श्लोक ३४), कन्दर्पदर्पदलने यौवनादन्यदस्ति (श्लोक ७०), हतमपि निहन्त्येव मदनः (श्लोक ६३), प्रियः को नाम योषिताम् (श्लोक ८०) इत्यादि।

वैराग्यशतक के सुभाषित वाक्य– अहह गहनो मोहमहिमा (श्लोक २०), सर्वं यस्य वाशादगात्स्मृतिपदं कालाय तस्मै नमः (श्लोक ३६), मनसि च परितुष्टे कोऽर्थवान् को द्ररिद्रः समीहामहे (श्लोक ६२), न जाने संसारः किममृतमयः किं विषमयः (श्लोक ८६), मन्ये ते परमेश्वराः शिरसि यैर्बद्धा न सेवांजलिः (श्लोक ६३), हा कष्टं पुरुषस्य जीर्णवयसः पुत्रोऽप्यमित्रायते (श्लोक ११३) इत्यादि।

इसके अतिरिक्त इन शतकों की विषय-वस्तु इस प्रकार है

12.4.1 नीतिशतक

नीतिशतक नाम से स्पष्ट है कि यह मनुष्य के जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के अनुरूप नीतियों का वर्णन करती है। इसके विषय में विस्तार से आगे कहा जायेगा।

12.4.2 शृंगारशतक

ग्रन्थ के नामकरण से स्पष्ट है कि शृंगारशतक में शृंगार का वर्णन है, जिसमें स्त्री-सौन्दर्य की मोहकता, इसके रूपजाल एवं विभिन्न-विलास का वर्णन है। ध्यातव्य है कि यहाँ मंगलाचरण में कामदेव को नमस्कार किया गया है, जिसके प्रहार से मनुष्य तो क्या ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी अपनी रक्षा नहीं कर सके हैं। इस प्रकार मंगलाचरण में कामदेव की आराधना करना-स्वयं में एक अपवाद कहा जा सकता है, क्योंकि सामान्यरूप से संस्कृत साहित्य में मंगलाचरण में त्रिदेवों अथवा किसी देवी की अर्चना देखी जाती है। अतः स्पष्ट है इस वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण से इस शतक की विषय-वस्तु का ज्ञान करा दिया जाता है। मंगलाचरण का श्लोकार्थ इस प्रकार है कि जिसने ब्रह्मा, शम्भु, महेश को भी स्त्रियों के गृहकार्य करने के लिये दास बना रखा है, जिसके प्रहार से कोई मनुष्य और देवता भी नहीं बच सके हैं, ऐसे कामदेव को नमस्कार है। मंगलाचरण के पश्चात् के श्लोकों में स्त्रियों के विलासपूर्ण भाव–व्यवहार की चर्चा करते हुए उसकी निन्दा की गयी है। कवि के अनुसार अर्धनेत्र से कटाक्ष करना, मीठी वाणी बोलना, लज्जापूर्वक हँसना, लीला करते हुए मन्द-मन्द चलना और फिर घूमकर खड़ी हो जाना, ये स्त्रियों के अलंकार भी हैं एवं शस्त्र भी हैं। अपने शारीरिक गुणों से यह सभी पुरुषों को अपने वश में कर लेती हैं। पुरुष को सुन्दर स्त्री के बिना जीवन ही व्यर्थ लगता है। पुरुष को मृगनयनी स्त्री के बिना समस्त संसार अन्धकारमय प्रतीत होता है–

सति प्रदीपे सत्यग्नौ सत्सु तारारवीन्दुषु।

विना मे मृगशावाक्ष्या तमोभूतमिदं जगत्।।१४।।

कवि कहते हैं कि पण्डितों के जीवनयापन के लिये दो ही मार्ग सुलभ हैं प्रथम या तो वह तत्त्वज्ञानरूपी अमृत रस में स्नान करके अपनी बुद्धि को निर्मल कर ले या फिर किसी सुन्दर शरीर वाली स्त्री जिसका स्तन पुष्ट हो और जघन भोगयोग्य हो, उसकी शरण में जाकर जीवन व्यतीत करे। भर्तृहरि के अनुसार साथ रहने पर थोड़ा-थोड़ा नेत्रों को बन्द करके जो एक युगल को प्राप्त होता है, वही वास्तव में कामदेव का पुरुषार्थ है–

आमीलितनयनानां यः सुरतरसोऽनुसंविदं कुरुते।
मिथुनैर्मिथोऽवधारितमवितथमिदमेव कामनिर्बहणम्।। २७।।

ऋतुएं भी कामदेव की सहायक होती हैं, अतः कामदेव से बच पाना अत्यन्त दुष्कर है। किन्तु यही मोह लेने वाली स्त्री दुःख का कारण बन जाती है, जब यह नेत्रों से दूर हो जाती है। यह स्त्रियां दुश्चरिता भी होती हैं। कवि के अनुसार स्त्रियाँ वार्तालाप किसी अन्य पुरुष से करती हैं, विलासपूर्वक किसी अन्य को देखती हैं और उसी समय किसी दूसरे से मिलने की चाह हृदय में रखती हैं, अतः वास्तव में स्त्रियों का कोई भी प्रिय नहीं होता है। **'मधु तिष्ठति वाचि योषितां हृदि हालाहलमेव केवलम्'** अर्थात् इनके अधरों में अमृत और हृदय में विष रहता है। यह ऐसी सर्परूपा है, जिसकी कोई औषधि नहीं है। नारियों में भी वेश्याएं और ज्यादा हानिकारक होती हैं। इस प्रकार कवि विविध प्रकार से स्त्री के दुश्चरित्र की व्याख्या करते हुए अपने श्रृंगारशतक का समापन करते हैं।

12.4.3 वैराग्यशतक

कवि को ऐसा प्रतीत होता है कि स्त्री-सौन्दर्य में लीन रहने पर पुरुष की मात्र हानि होती है, अतः स्त्री-मोह छोड़कर वैराग्य ग्रहण करना उत्तम है, क्योंकि यही शान्ति और आनन्द का मार्ग प्रदान करता है। इस दृष्टि से श्रृंगार के पश्चात् वैराग्यशतक की रचना का औचित्य तर्कसंगत प्रतीत होता है। अतः वैराग्यशतक के मंगलाचरण में सदाशिव के द्वारा कामदेव को भस्म करते हुए बताया गया है। भर्तृहरि के अनुसार सांसारिक सुख के पीछे भागते हुए मनुष्य को कभी भी अपने आकांक्षित वस्तु की प्राप्ति नहीं हो पाती है। वृद्ध हो जाने पर भी उसकी तृष्णा कभी समाप्त नहीं होती है। वह कभी भी निःस्वार्थ भाव से कर्म नहीं करता है। किन्तु यदि वह स्वयं से विषयों का त्याग करे तो उसका त्याग महा-सुख का कारण बनता है, इसके विपरीत जब विषय मनुष्य को त्यागते हैं, तो मन को बहुत सन्ताप देते हैं। अतः सांसारिक विषयों का स्वयं त्याग करना ही श्रेयस्कर है–

अवश्यं यातारश्चिरतरमुषित्वाऽपि विषया
वियोगे को भेदस्त्यजति न जनो यत्स्वयममून्।
व्रजन्तः स्वातन्त्र्यादतुलपरितापाय मनसः
स्वयं त्यक्त्वा ह्येते शमसुखमनन्तं विदधाति।।१६।।

अतः तृष्णा का त्याग करके शान्ति, सन्तोषादि गुण का ग्रहण करना चाहिये। इससे स्वयं का मन प्रसन्न होता है और शनैः शनैः आत्मज्ञान अर्थात् विवेक-ज्ञान प्राप्त हो जाता है। संसार के सारे पदार्थ किसी न किसी भय के स्रोत हैं, यथा भोग से रोग का भय, उत्तम कुल प्राप्त होने पर च्युति का भय, बलवान् होने पर शत्रुता का भय इत्यादि। किन्तु वैराग्य ही ऐसा पदार्थ है जिससे अभय प्राप्त होता है–

भोगे रोगभयं कुले च्युतिभयं वित्ते नृपालाद्भयं
मौने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जराया भयम्।
शास्त्रे वादभयं गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयं
सर्वं वस्तु भयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम्।।३४।।

कवि बड़े ही सुन्दर तरीके से संसार की विभिन्न उपमाओं के माध्यम से व्याख्या करते हैं–

आशा नाम नदी मनोरथजला तृष्णातरङ्गाकुला
रागग्राहवती वितर्कविगहा धैर्यद्रुमध्वंसिनी।
मोहावर्तसुदुस्तराऽतिगहना प्रोत्तुङ्गचिन्तातटी
तस्याः पारगता विशुद्धमनसो नन्दन्ति योगीश्वराः।। ४३।।

अतः आशा नाम की नदी में मनोरथरूपी जल भरा है और यह तृष्णारूपी तरंगों से पूर्ण है, प्रीति ही इसमें मगर है, नाना प्रकार के तर्क इसमें पक्षी हैं इत्यादि। इसके विपरीत जिसे वैराग्य प्राप्त हो गया है या फिर जो वैराग्यप्राप्ति के लिये तत्पर है, उसके लिये हाथ बर्तन हैं, घूमते-फिरते जो कुछ मिले, वह उत्तम अन्न है, दिशायें ही वस्त्र हैं, पृथ्वी ही पलंग है। ऐसे वैराग्यप्राप्त जन को "जो तुम हो, वही हम हैं, और जो हम हैं, वही तुम हो। परस्पर कुछ भेद नहीं है" ऐसा बोध सदैव रहता है। कवि के अनुसार वैराग्य प्राप्त व्यक्ति को सदैव माया-मोह के बन्धन से परे रहकर शिव की भक्ति करते रहना चाहिये। इस प्रकार विभिन्न प्रकार से सांसारिक वस्तुओं की अनित्यता का समर्थन करते हुए ईश्वर को सर्वश्रेष्ठ बताते हुए उसकी भक्ति की सहायता से वैराग्य के द्वारा विवेक-ज्ञान तक पहुंचने का मार्ग इस शतक का अभिधेय है।

बोध प्रश्न 2

1. **निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिह्न लगाइये।**
   (i) गीतिकाव्य के अन्तर्गत आते हैं – मुक्तक काव्य/महाकाव्य
   (ii) नीतिशतक में श्लोकों की संख्या है – 103/111
   (iii) भर्तृहरि का प्रिय छन्द है – उपमा/शार्दूलविक्रीडित
   (iv) 'सेवाधर्मः परमगहनो योगिनामप्यगमः' सूक्ति वाक्य है – नीतिशतक/वैराग्यशतक
   (v) शृंगारशतक के मंगलाचरण में स्तुति की गयी है – शंकर/कामदेव
   (vi) 'अहह गहनो मोहमहिमा' सूक्ति वाक्य है – वैराग्यशतक/शृंगारशतक
2. श्रव्य काव्य के कितने उपभेद हैं ? उनके नाम लिखिये।

   .....

   .....
3. अग्निपुराण के अनुसार मुक्तक काव्य का लक्षण लिखिये।

   .....

   .....

अभ्यास प्रश्न 2

1. शृंगारशतक का प्रतिपाद्य विषय क्या है?
2. शतकत्रय के दस सुभाषित लिखिये।

12.5 नीतिशतक का प्रतिपाद्य

इस ग्रन्थ में कवि ने नीतिशास्त्र के सार्वभौमिक सिद्धान्तों की चर्चा की है। नीतिशतक व्यावहारिक उपदेशों का भण्डार है। विद्वानों ने नीतिशतक की विषयवस्तु को ११ पद्धतियों में बांटा है, जो इस प्रकार हैं–

(१)ब्रह्म की स्तुति, (२) मूर्ख निन्दा, (३) विद्वत्पद्धति, (४) मानशौर्यपद्धति, (५) अर्थपद्धति, (६) दुर्जनपद्धति, (७) सुजनपद्धति, (८) परोपकार पद्धति, (९) धैर्य-पद्धति, (१०) दैव-प्रशंसा और (११) कर्म-पद्धति।

ब्रह्म स्तुति के अन्तर्गत मंगलाचरण में शान्त-ज्योतिस्वरूप ब्रह्म को नमस्कार किया गया है। मूर्खनिन्दा प्रकरण में भर्तृहरि ने तीन प्रकार के मनुष्य की गणना की है– अज्ञ, विशेषज्ञ और अल्पज्ञ। इनमें से ज्ञानी, अज्ञानी क्रमशः अतिसुखपूर्वक तथा सुखपूर्वक साध्य हैं, किन्तु अल्पज्ञ को ब्रह्मा भी नहीं साध सकते हैं। उसे किसी भी विषय में समझाना असम्भव है–

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति।।३।।

लोक और शास्त्र में सभी प्रकार के रोगों के लिये औषधियाँ हैं, किन्तु मूर्खता के लिये कोई भी औषधि नहीं है। विद्वत्पद्धति में विद्वान् की महत्ता बतायी गयी है। कवि कहते हैं कि किसी भी राजा के राज्य में यदि कोई कवि विद्वान् निर्धन है, तो यह कवि की नहीं, अपितु राजा की निर्धनता है, भला मणि के मोल को न समझने से मणि का मूल्य कैसे कम हो सकता है, मोल तो उस कुपरीक्षक का कम होता है, जिसने मणि का उचित मूल्य नहीं लगाया। विद्वान् प्रत्येक स्थिति में राजा से श्रेष्ठ होता है। मानशौर्य पद्धति में कहा गया है कि भगवान् की कृपा से ही किसी को सच्चरित्र पुत्र, पतिव्रता स्त्री, सर्वदा अनुग्रह करने वाले स्वामी प्राप्त होते हैं। भगवत्कृपा न हो तो समस्तसाधनसम्पन्न व्यक्ति भी विधि के विधान को नहीं टाल सकता है। जिस प्रकार से कई दिन से भूखा, दुर्बल, वृद्धावस्था को प्राप्त, शक्तिहीन, तेजहीन गजराज किसी भी स्थिति में सूखी घास नहीं खाता है, अपनी परिस्थितियों से समझौता नहीं करता है, उसी प्रकार से सत्पुरुषजन दुष्टों से किसी भी स्थिति में याचना नहीं करते हैं, न्यायपूर्वक जीविकोपार्जन करते हैं। प्राण का भय होने पर भी वह दुष्कर्म नहीं करते हैं। विपत्ति में भी श्रेष्ठजनों का आचरण नहीं त्यागते हैं। अर्थपद्धति अथवा द्रव्यप्रशंसा के अन्तर्गत कवि ने धन के महत्त्व को समझाया है। धन के न रहने पर या फिर समाप्त हो जाने पर मनुष्य की स्थिति परिवर्तित हो जाती है। जिसके पास द्रव्य अर्थात् धन होता है, वही व्यक्ति कुलीन, पण्डित, गुणज्ञ, वक्ता और दर्शनीय हो जाता है। धन की गति भी तीन प्रकार की होती है–दान, भोग और नाश। जिसने धन का न भोग किया, न दान दिया, उसके धन का स्वतः नाश हो जाता है–

दानं भोगो नाशस्तिस्त्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति।।४३।।

इसके पश्चात् कवि ने दुर्जन पद्धति में दुष्ट व्यक्ति के चरित्र का वर्णन किया है। करुणा न करना, अकारण विग्रह करना, पराये धन और परायी स्त्री की चाह करना, अपने लोग और मित्रों की बात को न सुनना इत्यादि दुष्टजन के लक्षण होते हैं–

अकरुणत्वमकारणविग्रहः परधने परयोषित च स्पृहा।
सुजनबन्धुजनेष्वसहिष्णुता प्रकृतिसिद्धमिदं हि दुरात्मनाम्।।५२।।

गुणों में भी दोषारोपण करना इनका स्वभाव है। अतः इनकी दृष्टि में लज्जावान् पुरुष शिथिल, व्रतधारी दम्भी, पवित्र व्यक्ति पाखण्डी, शूर व्यक्ति निर्दयी, सीधा व्यक्ति मूर्ख होता है। ऐसे दुष्टजन यदि विद्वान् हों तो भी इनका त्याग ही उचित है। सुजन-पद्धति में भर्तृहरि ने सज्जन व्यक्ति का बखान किया है। सज्जन पुरुषों की सत्संग में वाञ्छा, नम्र व्यवहार, विद्या में व्यसन, अपनी स्त्री में ही अनुरक्ति, लोकोपवाद से भय, ईश्वर में भक्ति आदि की प्रवृत्ति होती है। वह सदैव विपत्ति में धैर्य, ऐश्वर्य में क्षमा, युद्ध में पराक्रम, स्वयश में रुचि रखता है–

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्।।६३।।

सज्जन व्यक्ति का चित्त उसके समृद्धि काल में अत्यन्त कोमल रहता है और विपत्ति काल में शिला के समान कठोर हो जाता है। परोपकार पद्धति में परोपकार की महिमा का बखान किया है। परोपकारी पुरुष का स्वभाव फल लगे हुए वृक्ष के समान होता है, वृक्ष पर जितना भी फल लगता जाता है, वह उतना ही झुकता जाता है, उसी प्रकार परोपकार करने वाला व्यक्ति नम्र होता है–

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैर्नवाम्बुभिर्भूमिविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ।।७१।।

परोपकारी व्यक्ति सदैव ही प्रशंसनीय होते हैं, इनकी संगति में आकर दुर्जन भी गुणवान् हो जाता है। धैर्यपद्धति में कवि यह कहते हैं कि धीरवान् व्यक्ति अपने निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति किये बिना किसी भी कार्य को बीच में नहीं छोड़ते हैं। इसीलिये तो समुद्र-मन्थन में अमृत-प्राप्ति न होने तक देवताओं ने विश्राम नहीं किया। इसी प्रकार धीर व्यक्ति कभी न्यायोचित मार्ग का त्याग नहीं करता है। अतः विपत्ति आने पर भी सज्जन सन्तप्त नहीं होते हैं। कवि कहते हैं–

छिन्नोऽपि रोहति तरुः क्षीणोऽप्युपचीयते पुनश्चन्द्रः।
इति विमृशन्तः सन्तः सन्तप्यन्ते न विप्लुता लोके।।८८।।

दैव-प्रशंसा में भाग्य के बलवान् होने को समझाया है। भाग्य के प्रतिकूल होने पर मनुष्य का प्रयत्न कभी फलित नहीं होता है, इसीलिये बृहस्पति जैसा मन्त्री, वज्र जैसा शस्त्र, देवताओं की विशाल सेना और इन सबसे ऊपर विष्णु का इन्द्र पर अनुग्रह– इतने अनुकूल सहायक कारण होने पर भी देवताओं के राजा इन्द्र को असुरों से पराजित होना पड़ा। यह दुष्परिणाम भाग्य के कारण ही प्राप्त हुआ। भाग्यहीन पुरुष कहीं भी जाता है, विपत्ति उसके पीछे-पीछे जाती है। कर्म-पद्धति में कवि ने समझाया है कि भाग्य से ज्यादा बलवान् कर्म है। देवता, मनुष्य तथा कर्मफल आदि सब कर्म के ही अधीन रहते हैं। यह कर्म ही है, जिसने ब्रह्मा को निरन्तर सृष्टिकार्य करने में प्रवृत्त रखा, विष्णु को बारम्बार अवतार ग्रहण करने के लिये उद्यत किया तथा रुद्र को कपाल लेकर भिक्षा मांगने के लिये विवश किया–

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माण्डभाण्डोदरे
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासंकटे।
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारितः
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे।। ६६।।

पूर्वजन्म में किये गये संचित कर्म ही मनुष्य के सहायक होते हैं। अच्छे कार्य के बिना अच्छे फल की प्राप्ति नहीं हो सकती है। अतः सदैव सत्कर्म करने चाहिये। अतः कार्य करने के पूर्व कार्य के विषय में सूक्ष्मता के साथ विचार कर लेना चाहिये। इस प्रकार भर्तृहरि ने इन प्रकरणों के माध्यम से मानव-जीवन के लिये उपयोगी उपदेशों का संग्रह नीतिशतक में किया है और यह उपदेश आज भी मनुष्य जीवन में अपनी सार्थकता बनाये हुए हैं।

बोध प्रश्न 3

1. नीतिशतक में कितनी पद्धतियाँ हैं ? उनके नाम लिखिये।

   .....

   .....

2. मूर्खनिन्दा प्रकरण में भर्तृहरि ने कितने प्रकार के मनुष्य की गणना की है ? लिखिये।

   .....

   .....

3. अर्थपद्धति के अन्तर्गत कवि ने किसका महत्त्व प्रतिपादित किया है ?

.....

.....

4. भर्तृहरि के अनुसार धन की कितनी गतियाँ हैं ?

.....

.....

5. भर्तृहरि ने दुर्जन व्यक्ति के क्या लक्षण स्वीकार किये हैं ?

.....

.....

6. परोपकारी व्यक्ति का स्वभाव कैसा होता है ?

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 3

1. नीतिशतक के प्रतिपाद्य विषय पर टिप्पणी लिखिये।

12.6 सारांश

- भर्तृहरि का जीवन-परिचय प्राप्त हुआ। इनसे सम्बन्धित किंवदन्तियों, लोकोक्तियों का ज्ञान हुआ।
- भर्तृहरि के सामाजिक अनुभव के विषय में जानकारी प्राप्त की।
- शतकत्रय के माध्यम से भर्तृहरि के काव्य-वैशिष्ट्य का ज्ञान हो गया।
- शतकत्रय के अभिधेय अर्थात् विषय-वस्तु का ज्ञान प्राप्त हुआ। अतः भर्तृहरि का संस्कृत साहित्य में महत्त्व एवं उनका साहित्यिक योगदान स्पष्ट हुआ।
- नीतिशतक में प्रतिपादित विभिन्न पद्धतियों के विषय में जानकारी प्राप्त की।
- संक्षिप्त में मुक्तक काव्य के स्वरूप का ज्ञान हुआ।

12.7 शब्दावली

काय — शरीर

तिमिर — अन्धकार

विगलित — नष्ट होना

नितरां कुपित — अत्यन्त क्रुद्ध

वैदग्ध्यकीर्ति — चतुरता के यश

वित्त — धन

कपालपाणिपुटके — मस्तक के कंकाल को दोनों हाथों में थामकर

मदन — कामदेव

12.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भर्तृहरिशतकत्रयम्, ददन उपाध्याय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, २०१७
2. शतकत्रय में समाज और संस्कृति, पुष्पा, भारतीय विद्या प्रकाशन, दिल्ली २०१६
3. नीतिशतकम्, बलवान सिंह यादव, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी, २००८
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, वाराणसी, १९९९
5. संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास (छात्रोपयोगी संस्करण), रामनाथ त्रिपाठी शास्त्री (संपादक), चौखम्बा पब्लिशर्स, वाराणसी, २००३

12.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. (i) क्षेमेन्द्र (ii) बलदेव उपाध्याय (iii) परब्रह्म (iv) व्याकरणशास्त्र (v) सुशीला देवी
2. (i) युधिष्ठिर मीमांसक (ii) श्रृंगारशतक (iii) वीरसेन (iv) अमरुक

बोध प्रश्न 2

1. (i) मुक्तक काव्य (ii) 111 (iii) शार्दूलविक्रीडित (iv) नीतिशतक (v) कामदेव (vi) वैरग्यशतक
2. श्रव्य काव्य के तीन उपभेद हैं – पद्य, गद्य और चम्पू।
3. अग्निपुराण के अनुसार मुक्तक काव्य का लक्षण इस प्रकार है– 'मुक्तकं श्लोक एकैकञ्चमत्कारक्षमं सताम्' अर्थात् मुक्तक काव्य में प्रत्येक श्लोक स्वतन्त्र रूप से अपने सम्पूर्ण अर्थ का प्रकाशन करते हुये सहृदय में चमत्कार उत्पन्न करता है।

बोध प्रश्न 3

1. नीतिशतक में 11 पद्धतियाँ हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं– (1) ब्रह्म की स्तुति (2) मूर्ख निन्दा (3) विद्वत्पद्धति (4) मानशौर्यपद्धति (5) अर्थपद्धति (6) दुर्जनपद्धति (7) सुजनपद्धति (8) परोपकार-पद्धति (9) धैर्यपद्धति (10) दैव-प्रशंसा (11) कर्म-पद्धति
2. मूर्खनिन्दा प्रकरण में भर्तृहरि ने तीन प्रकार के मनुष्य की गणना की है – अज्ञ, विशेषज्ञ और अल्पज्ञ।
3. अर्थपद्धति के अन्तर्गत कवि ने धन का महत्त्व प्रतिपादित किया है।
4. भर्तृहरि के अनुसार धन की तीन गतियाँ हैं– दान, भोग और नाश।
5. करुणा न करना, अकारण विग्रह करना, पराये धन और परायी स्त्री की चाह करना, अपने लोग और मित्रों की बात को न सुनना इत्यादि दुर्जन व्यक्ति के लक्षण हैं।
6. परोपकारी व्यक्ति का स्वभाव फल लगे हुये वृक्ष के समान होता है, वृक्ष पर जितना भी फल लगता जाता है, वह उतना ही झुकता जाता है, उसी प्रकार परोपकारी व्यक्ति भी नम्र होता है।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 13 नीतिशतकम् – श्लोक 1-10

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 काव्यांश की व्याख्या

- 13.2.1 मंगलाचरण
- 13.2.2 सदुक्ति की स्थिति
- 13.2.3 मूर्ख की दुराराध्यता
- 13.2.4 मूर्खों का गुण
- 13.2.5 अल्पज्ञता की भयंकरता
- 13.2.6 क्षुद्र प्राणी की अज्ञानता
- 13.2.7 विवेकहीन लोगों का पतन

13.3 सारांश

13.4 शब्दावली

13.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- भर्तृहरि के काव्य-सौष्ठव को समझ सकेंगे।
- विद्वान् और मूर्ख के मध्य अन्तर को समझ सकेंगे।
- विद्या से रहित व्यक्ति की भयंकरता को जान सकेंगे।
- विद्या विहीन को प्रसन्न करना कितना कठिन है, यह जान सकेंगे।
- विद्या के महत्त्व को जान सकेंगे।
- सुन्दर सूक्तियों के प्रभाव को पहचान सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई में आपने भर्तृहरि के जीवन-वृत्त को जाना । आप यह जानते हैं कि भर्तृहरि महान् कवि, दार्शनिक और भाषातत्त्ववेत्ता थे, उन्होंने तीन शतकों की रचना की है। जो नीतिशतक, श्रृंगारशतक तथा वैराग्यशतक नाम से प्रसिद्ध हैं। नीतिशतक के प्रारम्भिक 20 पद्य आपके पाठ्यक्रम में निर्धारित हैं। प्रस्तुत इकाई में आप नीतिशतक के प्रथम दस पद्यों का अध्ययन करेंगे।

नीतिशतक का तात्पर्य है नीति विषयक 100 पद्य। इस शतक में कुल 111 पद्य हैं, जिनमें भर्तृहरि ने नीतिविषयक अनेक विषयों की चर्चा की है। इन श्लोकों के अध्ययन से यह ज्ञात

होता है कि समस्त पद्यों में निबद्ध विषय उनके जीवन का अनुभूत सत्य है। समाज के विभिन्न विषयों का आलोचन कर भर्तृहरि ने विद्वान् को सर्वाधिक महत्त्व दिया है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि विद्वान् राजा से भी बढ़कर है तथा विद्या से बड़ी कोई भी सम्पत्ति नहीं है। भर्तृहरि के नीतिशतक को संस्कृत के विद्वानों ने ग्यारह पद्धतियों में विभक्त किया है – ब्रह्म की स्तुति, मूर्खपद्धति, विद्वत्पद्धति, मान-शौर्यपद्धति, अर्थपद्धति, दुर्जनपद्धति, सुजनपद्धति, परोपकारपद्धति, धैर्यपद्धति, दैवपद्धति तथा कर्मपद्धति। इस इकाई में मूर्खपद्धति के 10 पद्यों की व्याख्या की जा रही है। इन्हें पढ़कर आप जीवन के अनेक पक्षों का अनुभव प्राप्त करेंगे।

भर्तृहरि के उक्त पद्य उनके अनुभवों से प्रसूत हैं। उन्होंने विद्वान् और मूर्ख के बीच के अन्तर को रेखांकित करते हुये, इन पद्यों में विद्वान् की महत्ता को प्रतिपादित किया है।

13.2 काव्यांश की व्याख्या

13.2.1 मंगलाचरण

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये।
स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे।।1।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक के माध्यम से कवि अपने ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के लिये परब्रह्म परमेश्वर की वन्दना करता हुआ, उसे नमस्कार करता है। ग्रन्थ के आदि में किया गया मंगलाचरण पाठकों, व्याख्याकारों तथा शिष्य परम्परा का कल्याण कारक होता है। अतः कविवर भर्तृहरि ने सर्वप्रथम परमेश्वर की स्तुति को उपस्थापित किया है।

अन्वयः – दिक्कालाद्यनवच्छिन्न–अनन्तचिन्मात्रमूर्तये स्वानुभूत्येकमानाय शान्ताय तेजसे नमः।

शब्दार्थ – दिक्काल = पूर्व आदि दिशायें तथा भूत, वर्तमान, भविष्य आदि काल, अनवच्छिन्न = जिसे मापा न जा सके, अनन्त = अन्त रहित, चिन्मात्रमूर्तये = चैतन्य विग्रह वाले, स्वानुभूत्येकमानाय = अनुभव मात्र से गम्य, शान्ताय = शान्त स्वरूप, तेजसे = ज्योति स्वरूप युक्त, नमः = नमस्कार है।

सन्धि –
- **दिक्कालादि** – दिक्काल + आदि (दीर्घ सन्धि)
- **अनवच्छिन्नानन्त** – अनवच्छिन्न + अनन्त (दीर्घ सन्धि)
- **चिन्मात्र** – चित् + मात्र (हल् अनुनासिक सन्धि)
- **अनुभूत्येकमानाय** – अनुभूति + एकमानाय (यण् सन्धि)

समास –

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तये – दिक् च कालः च, दिक्कालौ (द्वन्द्व समास), दिक्कालौ आदी येषां ते, दिक्कालादयः (बहुव्रीहि समास), दिक्कालादिभिः अनवच्छिन्नं, दिक्कालाद्यनवच्छिन्नम् (तृतीया तत्पुरुष समास), दिक्कालाद्यनवच्छिन्नम् अनन्तं चिन्मात्रमूर्तिः यस्य सः दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्तिः, (बहुव्रीहि समास) तस्मै।

स्वानुभूत्येकमानाय – स्वस्य अनुभूतिः, स्वानुभूतिः (षष्ठी तत्पुरुष समास), स्वानुभूतिः एव एकं मानं यस्य तत्, स्वानुभूत्येकमानम् (बहुव्रीहि समास), तस्मै।

अनुवाद – पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण आदि दस दिशाओं तथा भूत, भविष्य और वर्तमान रूप तीनों कालों से जो मापा नहीं जा सकता, जो अन्त रहित है, चैतन्य स्वरूप है तथा जो अपने अनुभव मात्र से जाना जा सकता है, उस शान्त, तेजस्वरूप परब्रह्म को नमस्कार है।

छन्द – अनुष्टुप्।

लक्षणम् – श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोः ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।

अनुष्टुप् या श्लोक के प्रत्येक पाद में 8 अक्षर होते हैं। इसमें षष्ठ अक्षर सदा गुरु होता है और पंचम अक्षर सदा लघु। द्वितीय और चतुर्थ चरण में सप्तम अक्षर लघु होता है और प्रथम तथा तृतीय चरण में गुरु होता है। अन्य अक्षर लघु या गुरु हो सकते हैं।

विशेष – भारतवर्ष में किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व अपने इष्ट देव की आराधना करने की परम्परा है। इस आराधना को मंगलाचरण कहते हैं। यह मंगलाचरण तीन प्रकार का होता है – नमस्कारात्मक, आशीर्वादात्मक तथा वस्तुनिर्देशात्मक। प्रस्तुत प्रसंग में कवि ने सर्वव्यापक परमेश्वर को नमस्कार करके नमस्कारात्मक मंगलाचरण किया है।

13.2.2 सदुक्ति की स्थिति

बोद्धारो मत्सरग्रस्ताः प्रभवः स्मयदूषिताः।
अबोधोपहताश्चान्ये जीर्णमङ्गे सुभाषितम्।।2।।

प्रसंग – समाज में विद्वानों की मत्सरग्रस्तता तथा राजाओं की अहंकारग्रस्तता को देखते हुये कवि का मानना है कि सुकवि की उक्तियाँ उसके हृदय में ही नष्ट हो जायें। ईर्ष्याग्रस्त होने के कारण विद्वान् उसे सुनेंगे नहीं। गर्वान्वित होने के कारण राजा उसका सम्मान नहीं करेगा तथा सामान्य जन अबोध ग्रस्त होने के कारण उसे समझने में समर्थ नहीं है।

अन्वयः – बोद्धारः मत्सरग्रस्ताः प्रभवः स्मयदूषिताः। अन्ये च अबोधोपहताः (सन्ति अतः) सुभाषितम् अङ्गे जीर्णम्।

शब्दार्थ – बोद्धारः = परिज्ञाता विद्वान्, मत्सरग्रस्ताः = मात्सर्य से ग्रस्त, प्रभवः = राजा गण, स्मयदूषिताः = गर्व से दूषित हैं। अन्ये च = इन दोनों से अतिरिक्त लोग, अबोधोपहताः = अज्ञान से उपहत, सुभाषितम् = सदुक्ति, अङ्गे = मुख में, जीर्णम् = नष्ट हो गई।

सन्धि –

अबोधोपहताः – अबोध + उपहताः (गुण सन्धि)

चान्ये – च + अन्ये (दीर्घ सन्धि)

समास –

मत्सरग्रस्ताः – मत्सरेण ग्रस्ताः (तृतीया तत्पुरुष समास)

स्मयदूषिताः – स्मयेन दूषिताः (तृतीया तत्पुरुष समास)

अबोधः – न बोधः (नञ् तत्पुरुष समास)

अबोधोपहताः – अबोधेन उपहताः (तृतीया तत्पुरुष समास)

अनुवाद – कवि के सुभाषित वचनों का कोई भी व्यक्ति सच्चा पारखी नहीं है, क्योंकि विद्वद्वर्ग ईर्ष्याग्रस्त हैं तथा नृपवृन्द गर्व से मत्त हैं और अन्य साधारण शिक्षित लोग अज्ञान

से दबे हुए हैं। अतः सुभाषित आज तक कवि के हृदय में ही रह गया, उसे बाहर निकलने का अवसर ही नहीं प्राप्त हुआ।

छन्द – अनुष्टुप्।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

13.2.3 मूर्ख की दुराराध्यता

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः।
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति।।3।।

प्रसंग – महाकवि भर्तृहरि अज्ञानी, विशेषज्ञ तथा मूर्ख में अन्तर बताते हुये कहते हैं कि इन तीनों में स्वल्प ज्ञान से अहंकृत मूर्ख सबसे भयंकर होता है तथा उसे ब्रह्मा भी प्रसन्न नहीं कर सकता।

अन्वयः – अज्ञः सुखम् आराध्यः विशेषज्ञः सुखतरम् आराध्यते ब्रह्मा अपि ज्ञानलवदुर्विदग्धं नरं न रञ्जयति।

शब्दार्थ – अज्ञः = अज्ञानी, सुखम् = कुछ प्रयास से, आराध्यः = प्रसन्न करने योग्य, विशेषज्ञः = ज्ञानी, सुखतरम् = बिना किसी प्रयास के, आराध्यते = सन्तुष्ट किया जा सकता है, ब्रह्मापि = ब्रह्मा भी, ज्ञानलवदुर्विदग्धम् = अल्प ज्ञान वाले, नरम् = पुरुष को, न रंजयति = प्रसन्न नहीं कर सकता।

सन्धि – **ब्रह्मापि** – ब्रह्मा + अपि (दीर्घ सन्धि)

समास – **अज्ञः** – न ज्ञः अज्ञः (नञ् तत्पुरुष समास)

विशेषज्ञः – विशेषं जानाति इति विशेषज्ञः (उपपद तत्पुरुष समास)

ज्ञानलवदुर्विदग्धम् – ज्ञानस्य लवः ज्ञानलवः (षष्ठी तत्पुरुष समास)
ज्ञानलवेन दुर्विदग्धम् (तृतीया तत्पुरुष समास)

अनुवाद – अज्ञानी मनुष्य को कुछ प्रयास करके प्रसन्न किया जा सकता है। विशिष्ट विद्वान् को बिना किसी प्रयास के प्रसन्न किया जा सकता है। किन्तु अल्पज्ञान से भयंकर व्यक्ति को स्वयं ब्रह्मा भी प्रसन्न नहीं कर सकते।

छन्द – आर्या।

लक्षणम् – यस्याः पादे प्रथमे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश साऽऽर्या।।

यह मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम पाद में 12 मात्रायें होती हैं, द्वितीय में 18, तृतीय में 12 और चतुर्थ में 15 मात्रायें होती हैं।

प्रसह्य मणिमुद्धरेन्मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरात्
समुद्रमपि सन्तरेत्प्रचलदूर्मिमालाकुलम्।
भुजङ्गमपि कोपितं शिरसि पुष्पवद्धारयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्।।4।।

प्रसंग – मूर्ख की विशेषता बताते हुये भर्तृहरि का कहना है कि प्रचण्ड लहरों से व्याप्त समुद्र को तैरना तथा अन्य उस प्रकार के कठिन कार्य करना सम्भव है किन्तु मूर्ख के चित्त को प्रसन्न करना सर्वथा असम्भव है।

अन्वयः – मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरात् मणिं प्रसह्य उद्धरेत्। प्रचलत् - ऊर्मिमाला - आकुलं समुद्रम् अपि सन्तरेत्। कोपितं भुजङ्गम् अपि पुष्पवत् शिरसि धारयेत्। तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तं न आराधयेत्।

शब्दार्थ – मकरवक्त्र-दंष्ट्रान्तरात् = मगरमच्छ की दाढ़ों के बीच से, मणिम् = रत्न को, प्रसह्य = शक्तिपूर्वक, उद्धरेत् = छुड़ा ले, प्रचलत्-ऊर्मिमाला-आकुलम् = चपल लहरों की पंक्तियों से व्याप्त भयंकर, समुद्रम् अपि = सागर को भी, सन्तरेत् = पार कर ले। कोपितम् = क्रोधित हुए, भुजङ्गम् अपि = साँप को भी, पुष्पवत् = पुष्प की तरह, शिरसि = सिर पर, धारयेत् = रख ले। तु = किन्तु, प्रतिनिविष्ट-मूर्खजनचित्तम् = दुराग्रही एवं मूर्ख व्यक्ति के मन को, न आराधयेत् = सन्तुष्ट करने का प्रयास न करें।

सन्धि – ऊर्मिमालाकुलम् – ऊर्मिमाला + आकुलम् (दीर्घ सन्धि)

पुष्पवद्धारयेत् – पुष्पवत् + धारयेत् (जश्त्व सन्धि)

समास – मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरात्– मकरस्य वक्त्रं, मकरवक्त्रं (षष्ठी तत्पुरुष समास) तस्मिन् दंष्ट्राः मकरवक्त्रदंष्ट्राः (सप्तमी तत्पुरुष समास), मकरवक्त्रदंष्ट्रानाम् अन्तरं मकरवक्त्रदंष्ट्रान्तरं (षष्ठी तत्पुरुष समास) तस्मात् ।

प्रचलदूर्मिमालाकुलम् – प्रचलन्त्यः ताः ऊर्मयः च प्रचलदूर्मयः (कर्मधारय) प्रचलदूर्मीनां मालाः प्रचलदूर्मिमालाः (षष्ठी तत्पुरुष समास) ताभिः मालाभिः आकुलम् (तृतीया तत्पुरुष समास) ।

प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम् – प्रतिनिविष्टः च असौ मूर्खजनः, प्रतिनिविष्टमूर्खजनः (कर्मधारय समास) प्रतिनिविष्टमूर्खजनस्य चित्तम् (षष्ठी तत्पुरुष समास)

अनुवाद – मनुष्य चाहे तो मगरमच्छ की दाढ़ों के बीच से मणि को जबरदस्ती निकाल सकता है। बड़ी-बड़ी लहरों से परिपूर्ण समुद्र को भी पार कर सकता है। क्रोध से उद्दीप्त सर्प को फूल की तरह अपने सिर पर धारण कर सकता है। किन्तु जिसके मन में कोई बात बैठ गई है (जो शंका से भर गया है), ऐसे हठी मूर्ख के चित्त को प्रसन्न नहीं कर सकता है।

छन्द – पृथ्वी।

लक्षणम् – जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः।

अर्थात् पृथ्वी छन्द के प्रत्येक चरण में जगण, सगण, जगण, सगण, यगण, लघु और गुरु होते हैं तथा आठवें और नौवें वर्ण पर विराम होता है।

लभेत सिकतासु तैलमपि यत्नतः पीडयन्
पिबेच्च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिपासार्दितः।
कदाचिदपि पर्यटंछशविषाणमासादयेत्
न तु प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तमाराधयेत्।।5।।

प्रसंग – मूर्ख की दुराराध्यता को पुनः पुष्ट करते हुये कविवर भर्तृहरि का कहना है कि बालू से तेल निकालना, मृगतृष्णा में पानी प्राप्त करना, खरगोश के सींग प्राप्त करना जैसे दुस्साध्य कार्य सम्भव हैं किन्तु मूर्ख को प्रसन्न करना सर्वथा असम्भव है।

अन्वयः – यत्नतः पीडयन् सिकतासु अपि तैलं लभेत, पिपासार्दितः च मृगतृष्णिकासु सलिलं पिबेत्, पर्यटन् कदाचित् शशविषाणम् अपि आसादयेत्, प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तं तु न आराधयेत्।

शब्दार्थ – यत्नतः = परिश्रम से, पीडयन् = निचोड़ते हुये, सिकतासु = बालू के कणों में, अपि = भी, तैलम् = तेल को, लभेत = प्राप्त कर लें, च = और, पिपासार्दितः = प्यास से तड़पता हुआ, मृगतृष्णिकासु = मृगमरीचिकाओं में, सलिलम् = जल को, पिबेत् = पी सकता है, पर्यटन् = भ्रमण करता हुआ, कदाचित् = कभी, शशविषाणम् = खरगोश के सींग को, आसादयेत् = प्राप्त कर सकता है, तु = किन्तु, प्रतिनिविष्ट-मूर्खजनचित्तम् = दुराग्रहशाली शंकालू मूर्ख के मन को, न आराधयेत् = प्रसन्न नहीं किया जा सकता है।

सन्धि –

पिबेच्च – पिबेत् + च (श्चुत्व सन्धि)

पिपासार्दितः – पिपासा + आर्दितः (दीर्घ सन्धि)

पर्यटंछशविषाणम् – पर्यटन् + शशविषाणम् (श्चुत्व-छत्व सन्धि)

समास –

मृगतृष्णिकासु – मृगाणां तृष्णा मृगतृष्णा (षष्ठी तत्पुरुष समास) तासु

शशविषाणम् – शशस्य विषाणम् (षष्ठी तत्पुरुष समास)

पिपासार्दितः – पिपासया आर्दितः (तृतीया तत्पुरुष समास)

प्रतिनिविष्टमूर्खजनचित्तम् –प्रतिनिविष्टमूर्खजनस्य चित्तम् (षष्ठी तत्पुरुष समास)

अनुवाद – कोई भी मनुष्य परिश्रम करके बालू से तेल निकाल सकता है (जो कि असम्भव है)। प्यास से तड़पता हुआ व्यक्ति मृगमरीचिका में भी पानी पा सकता है (जो कि दुर्लभ है)। इधर-उधर भटकता हुआ व्यक्ति खरगोश के सींग पा सकता है (जो होता ही नहीं। इतने सब असम्भव कार्य हो सकते हैं)। किन्तु दुराग्रहशाली हठधर्मी मूर्ख के चित्त को प्रसन्न करना कभी भी सम्भव नहीं है।

छन्द – पृथ्वी।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

व्यालं बालमृणालतन्तुभिरसौ रोद्धुं समुज्जृम्भते
छेत्तुं वज्रमणिं शिरीषकुसुमप्रान्तेन सन्नह्यते।
माधुर्यं मधुबिन्दुना रचयितुं क्षाराम्बुधेरीहते
नेतुं वाञ्छति यः खलान्पथि सतां सूक्तैः सुधास्यन्दिभिः।।6।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कवि भर्तृहरि ने विविध दृष्टान्तों से स्पष्ट किया है कि मूर्ख को किसी भी प्रकार से सन्तुष्ट करना असम्भव है।

अन्वयः – यः सुधास्यन्दिभिः सूक्तैः खलान् सतां पथि नेतुं वाञ्छति, असौ बालमृणालन्तुभिः व्यालं रोद्धुं समुज्जृम्भते, शिरीषकुसुमप्रान्तेन वज्रमणिं छेत्तुं सन्नह्यते, मधुबिन्दुना क्षाराम्बुधेः माधुर्यं रचयितुम् (च) ईहते (इव)।

शब्दार्थ – यः = जो मनुष्य, सुधास्यन्दिभिः = अमृत बरसाने वाली, सूक्तैः = सदुपयोगी उक्तियों द्वारा, खलान् = दुष्टों को, पथि = रास्ते पर, नेतुम् = लाने की, वाञ्छति = इच्छा रखता है, असौ = वह मनुष्य, बालमृणालतन्तुभिः = कमल के कोमल रेशों से, व्यालम् = पागल हाथी को, रोद्धुम् = रोक पाने का, समुज्जृम्भते = प्रयास करता है, शिरीषकुसुमप्रान्तेन = कोमल शिरीष पुष्प की नोंक से, वज्रमणिम् = कठोर रत्न को (हीरे को), छेत्तुम् = छेदने का, सन्नह्यते = अभ्यास करता है, मधुबिन्दुना = शहद की बूँद से, क्षाराम्बुधेः = सागर के नमकीन जल को, माधुर्यम् = मीठा, रचयितुम् = बनाना, ईहते = चाहता है।

सन्धि –

तन्तुभिरसौ – तन्तुभिः + असौ (विसर्ग सन्धि)

क्षाराम्बुधेरीहते – क्षार + अम्बुधेः (दीर्घ सन्धि), क्षाराम्बुधेः+ ईहते (विसर्ग सन्धि)

समास –

सुधास्यन्दिभिः – सुधां स्यन्दन्ते तच्छीलानि सुधास्यन्दीनि, तैः (तृतीया तत्पुरुष समास)

शिरीषकुसुमप्रान्तेन – शिरीषकुसुमस्य प्रान्तः शिरीषकुसुमप्रान्तः, तेन (तृतीया तत्पुरुष समास)

मधुबिन्दुना – मधोः बिन्दुः मधुबिन्दुः, तेन (षष्ठी तत्पुरुष समास)

क्षाराम्बुधेः – क्षारश्चासौ अम्बुधिश्च क्षाराम्बुधिः (कर्मधारय समास) तस्य

अनुवाद – जो मनुष्य अमृत बरसाने वाली सदुपयोगी उक्तियों द्वारा दुष्टों को सही रास्ते पर लाने की इच्छा रखता है, उसका प्रयास वैसे ही है जैसे कोई मनुष्य कमल के कोमल रेशों से पागल हाथी को रोकने का प्रयास करता है। जैसे कोई कोमल शिरीष के पुष्प की नोंक से कठोर रत्न को (हीरे को) छेदने का अभ्यास करता है या जैसे कोई शहद की बूँद से सागर के खारे जल को मीठा बनाना चाहता है। अर्थात् जैसे ये सभी कार्य दुष्कर या असम्भव हैं, वैसे ही दुर्जनों को सदुक्तियों या मधुर वाणी से सन्मार्ग पर लाना असम्भव है।

छन्द – शार्दूलविक्रीडित।

लक्षणम् – सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्।

इस छन्द के प्रत्येक चरण में मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण और एक गुरु होता है तथा सात-सात वर्णों पर विराम होता है।

13.2.4 मूर्खों का गुण

स्वायत्तमेकान्तगुणं विधात्रा
विनिर्मितं छादनमज्ञतायाः।
विशेषतः सर्वविदां समाजे

विभूषणं मौनमपण्डितानाम्।।7।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में भर्तृहरि ने विद्वानों की सभा में मौन को मूर्ख का अलंकार कहा है।

अन्वयः – विधात्रा अपण्डितानां स्वायत्तम् एकान्तगुणम् अज्ञतायाः छादनं मौनं विनिर्मितम्। (इदं) सर्वविदां समाजे विशेषतः (अपण्डितानाम्) विभूषणम्।

शब्दार्थ – विधात्रा = विधाता (ब्रह्मा जी) ने, अपण्डितानाम् = मूर्खों के लिए, स्वायत्तम् = स्वतन्त्र, एकान्तगुणम् = अत्यधिक गुणों वाली, अज्ञतायाः = अज्ञानता का, छादनम् = आवरण, मौनम् = मौन को, विनिर्मितम् = निर्मित किया है, सर्वविदाम् = ज्ञाताओं के, समाजे = समाज में, विशेषतः = विशेष रूप से, विभूषणम् = आभूषण।

समास –

अपण्डितानाम् – न पण्डिताः अपण्डिताः (नञ् तत्पुरुष समास) तेषाम्

सर्वविदाम् – सर्वं विदन्तीति सर्वविदः (नित्य समास) तेषाम्

अनुवाद – विधाता (ब्रह्मा जी) ने मूर्खों के लिए स्वतन्त्र अत्यधिक गुणों वाली अज्ञानता का आवरण करने के लिये मौन को निर्मित किया है, ज्ञाताओं के समाज में विशेष रूप से यह आभूषण है। अर्थात् विद्वानों के समक्ष मूर्खों का मौन रहना उनका एक आभूषण है।

छन्द – उपजाति।

लक्षणम् – अनन्तरोदीरित लक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम।।

इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा छन्द के मिश्रण को उपजाति छन्द कहते हैं।

13.2.5 अल्पज्ञता की भयंकरता

यदा किंचिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किंचित्किंचिद् बुधजनसकाशादवगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः।।8।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में नीतिकार ने स्पष्ट किया है कि विद्वानों के समागम से अल्पज्ञ मनुष्य के अहंकार का विनाश होता है।

अन्वय – यदा अहं किंचिज्ज्ञः द्विपः इव मदान्धः समभवं तदा सर्वज्ञः अस्मि इति मम मनः अवलिप्तम् अभवत् (किन्तु) यदा बुधजनसकाशात् किंचित् किंचित् अवगतं तदा अहं मूर्खः अस्मि इति मे मदः ज्वरः इव व्यपगतः।

शब्दार्थ – यदा = जब, अहम् = मैं, किंचिज्ज्ञः = अल्पज्ञानी था, द्विपः इव = हाथी के समान, मदान्धः = मदमत्त (मद से अन्धा), समभवम् = हो गया था, तदा = तब, सर्वज्ञः = सब कुछ जानने वाला, अस्मि = हूँ, इति = इस प्रकार, मम = मेरा, मनः = चित्त, अवलिप्तम् = गर्वित, अभवत् = हुआ, यदा = जब, बुधजनसकाशात् = विद्वानों के समागम से, किंचित् किंचित् = कुछ-कुछ, अवगतम् = सीखा, तदा = तब, अहं मूर्खः अस्मि = मैं तो अज्ञानी (मूर्ख) हूँ, इति = इस प्रकार, मे = मेरा, मदः = घमण्ड, ज्वरः इव = ज्वर की तरह, व्यपगतः = दूर हो गया।

सन्धि –

मदान्धः – मद + अन्धः (दीर्घ सन्धि)

सर्वज्ञोऽस्मि – सर्वज्ञः + अस्मि (विसर्ग सन्धि)

ज्वर इव – ज्वरः + इव (विसर्ग सन्धि)

समास –

किंचिज्ज्ञः – किंचित् जानाति इति किंचिज्ज्ञः (नित्य समास)

सर्वज्ञः – सर्वं जानाति इति सर्वज्ञः (नित्य समास)

अनुवाद – जब मैं अल्पज्ञानी था, मुझे शास्त्रों का अधिक ज्ञान नहीं था तब मैं हाथी के समान मदमत्त (मद से अन्धा) हो गया था। उस समय, सब कुछ जानने वाला हूँ, इस प्रकार मेरा चित्त गर्वित हुआ। अर्थात् शास्त्रों का अल्पज्ञान पाकर मैं अहंकार के वशीभूत होकर अपने को सब कुछ जानने वाला हूँ ऐसा समझने लगा था। किन्तु जब विद्वानों के समागम से कुछ-कुछ सीखने लगा तब मुझे ज्ञान हुआ कि मैं तो अज्ञानी (मूर्ख) हूँ, इस प्रकार मेरा घमण्ड ज्वर की तरह दूर हो गया (मेरा ज्ञानी होने का अहंकार विद्वानों के सम्पर्क में आने से चूर-चूर हो गया)।

छन्द – शिखरिणी।

लक्षणम् – रसैरुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी।

इस छन्द के प्रत्येक चरण में यगण, मगण, नगण, सगण, मगण, लघु और गुरु होता है तथा छठें और ग्यारहवें वर्ण पर विराम होता है।

13.2.6 क्षुद्र प्राणी की अज्ञानता

कृमिकुलचितं लालाक्लिन्नं विगन्धि जुगुप्सितं
निरुपमरसप्रीत्या खादन्नरास्थि निरामिषम्।
सुरपतिमपि श्वा पार्श्वस्थं विलोक्य विशङ्कते
न हि गणयति क्षुद्रो जन्तुःपरिग्रहफल्गुताम्।।9।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में कविवर भर्तृहरि ने प्रतिपादित किया है कि नीच कर्म करते हुये अधम व्यक्ति को उत्तम व्यक्तियों से भी शंका होती है।

अन्वयः – श्वा कृमिकुलचितं लालाक्लिन्नं विगन्धि जगुप्सितं निरामिषं नरास्थि निरुपमरसप्रीत्या खादन् पार्श्वस्थं सुरपतिम् अपि विलोक्य विशङ्कते हि क्षुद्रः जन्तुः परिग्रहफल्गुतां न गणयति।

शब्दार्थ – श्वा = कुक्कुर (कुत्ता), कृमिकुलचितम् = कीड़ों के समूह से परिपूर्ण, लालाक्लिन्नम् = मुँह की लार से गीले, विगन्धि = दुर्गन्धयुक्त, जुगुप्सितम् = घृणित, निरामिषम् = बिना मांस के, नरास्थि = मनुष्य की अस्थि (हड्डी) को, निरुपमरसप्रीत्या = अत्यधिक स्वादिष्ट की तरह, खादन् = खाता हुआ, पार्श्वस्थम् = समीप में स्थित, सुरपतिम् अपि = देवराज इन्द्र को भी, विलोक्य = दृष्टिगत कर, विशङ्कते = शंकायुक्त होता है, हि = क्योंकि, क्षुद्रो जन्तुः = अधम प्राणी, परिग्रहफल्गुताम् = प्राप्त की हुई वस्तुओं की निस्सारता को, न गणयति = विचारता नहीं है।

सन्धि –

नरास्थि – नर + अस्थि (दीर्घ सन्धि)

समास –

कृमिकुलेन – कृमीनां कुलं कृमिकुलं (षष्ठी तत्पुरुष समास) तेन

निरामिषम् – निर्गतम् आमिषं यस्मात् (बहुव्रीहि समास) तत्

नरास्थि – नरस्य अस्थि (षष्ठी तत्पुरुष समास)

निरुपमरसप्रीत्या – निरुपमो रसः यस्य सः निरुपमरसः (बहुव्रीहि समास) तस्मिन् निरुपमरसे, निरुपमरसे या प्रीतिः निरुपमरसप्रीतिः (सप्तमी तत्पुरुष समास) तया

सुरपतिम् – सुराणां पतिः सुरपतिः (षष्ठी तत्पुरुष समास) तम्

परिग्रहफल्गुताम् – परिग्रहस्य फल्गुता परिग्रहफल्गुता (षष्ठी तत्पुरुष समास) ताम्

फल्गुता – फलं गतं यस्मात् सः फल्गुः, तस्य भावः

अनुवाद – कुक्कुर (कुत्ता) कीड़ों के समूह से परिपूर्ण, मुँह की लार से गीले दुर्गन्धयुक्त घृणित मांस रहित मनुष्य की अस्थि (हड्डी) को अत्यधिक स्वादयुक्त की तरह खाता हुआ समीप में स्थित देवराज इन्द्र को भी दृष्टिगत कर शंकायुक्त होता है कि कहीं यह मेरा भोजन तो नहीं छीन लेगा। क्योंकि अधम जीव प्राप्त की हुई वस्तुओं की अनुपयोगिता का विचार नहीं करता है अथवा ध्यान नहीं देता है।

छन्द – हरिणी।

लक्षणम् – रसयुगहयैः न्सौ म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा।

इस छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, लघु तथा गुरु होते हैं। छठें, दसवें तथा अन्तिम वर्ण में विराम होता है।

13.2.7 विवेकहीन लोगों का पतन

शिरः शार्वं स्वर्गात्पशुपतिशिरस्तः क्षितिधरं
महीध्रादुत्तुङ्गादवनिमवनेश्चापि जलधिम्।
अधोऽधो गङ्गेयं पदमुपगता स्तोकमथवा
विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः।।10।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में विवेक रहित व्यक्तियों के क्रमिक अधःपतन को स्पष्ट किया गया है।

अन्वयः – इयं गङ्गा स्वर्गात् शार्वं शिरः, पशुपतिशिरस्तः क्षितिधरम् उत्तुङ्गात् महीध्रात् अवनिम्, अवनेः च अपि जलधिम्, अधोऽधः स्तोकं पदम् उपगता अथवा विवेकभ्रष्टानां शतमुखः विनिपातः भवति।

शब्दार्थ – इयम् = यह, गङ्गा = गंगा नदी, स्वर्गात् = स्वर्गलोक से, शार्वम् = भगवान् शिव के, शिरः = सिर पर, पशुपतिशिरस्तः = शिवजी के सिर से (जटा से), क्षितिधरम् = पर्वत पर, उत्तुङ्गात् = ऊँचाई वाले, महीध्रात् = पर्वत (हिमालय) से, अवनिम् = धरती पर, अवनेः = धरती से, च अपि = और भी, जलधिम् = सागर में, अधोऽधः = नीचे-नीचे, स्तोकम् = तुच्छ, पदम् = पद को, उपगता = पहुँची, अथवा, विवेकभ्रष्टानाम् = अच्छे-बुरे को न जानने वालों का, शतमुखः = हजारों प्रकार से, विनिपातः = पतन (अधोगति की प्राप्ति), भवति = होता है।

सन्धि –

महीध्रादुत्तुङ्गात् – महीध्रात् + उत्तुङ्गात् (जश्त्व सन्धि)

उत्तुङ्गादवनिम् – उत्तुङ्गात् + अवनिम् (जश्त्व सन्धि)

अवनेश्च – अवनेः + च (अवनेस् + च, अवनेश् + च) (विसर्गसन्धि, श्चुत्व सन्धि)

चापि – च + अपि (दीर्घ सन्धि)

अधोऽधः – अधः + अधः (विसर्ग सन्धि, पूर्वरूप सन्धि)

गङ्गेयम् – गङ्गा + इयम् (गुण सन्धि)

समास –

पशुपतिशिरस्तः – पशूनां पतिः पशुपतिः (षष्ठी तत्पुरुष समास), पशुपतेः शिरः पशुपतिशिरः (षष्ठी तत्पुरुष समास) तस्मात्

क्षितिधरम् – धरतीति धरः (कृद्वृत्तिः) क्षितेः धरः क्षितिधरः (षष्ठी तत्पुरुष समास) तम्

विवेकभ्रष्टानां – विवेकात् भ्रष्टाः विवेकभ्रष्टाः (पंचमी तत्पुरुष समास) तेषाम्

शतमुखः – शतं मुखानि यस्य सः (बहुव्रीहि समास)

अनुवाद – यह गंगा नदी स्वर्गलोक से भगवान् शिव के सिर पर, शिवजी के सिर से (जटा से) पर्वत पर और ऊँचाई वाले पर्वत (हिमालय) से भी धरती पर इसी प्रकार क्रमशः नीचे-नीचे होती हुयी धरती से भी नीचे सागर में अधोगति को पहुँची। अतः यह उचित ही है कि अच्छे-बुरे को न जानने वालों का हजारों प्रकार से पतन निश्चित ही होता है। अर्थात् अविवेकी मनुष्य सर्वदा ही अधोगति को प्राप्त होता है।

छन्द – शिखरिणी।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

बोध प्रश्न–

1. नीचे दिये गये कथनों में से सत्य (√) तथा असत्य (x)कथन का चयन कीजिए–

i) भर्तृहरि ने नीतिशतक के मंगलाचरण में परब्रह्म को नमस्कार किया है। ( )

ii) नीतिशतक का मंगलाचरण वस्तुनिर्देशात्मक है । ( )

iii) नीतिशतक में नौ पद्धतियाँ हैं। ( )

iv) हठी मूर्ख के चित्त को प्रसन्न किया जा सकता है। ( )

v) अधम जीव प्राप्त की हुई वस्तुओं की अनुपयोगिता का विचार नहीं करता है।( )

vi) विवेकहीनों का विनिपात सैकड़ों प्रकार से होता है। ( )

अभ्यास प्रश्न–

1. ब्रह्मा भी किस मनुष्य को प्रसन्न नहीं कर सकता ?
2. 'प्रचलदूर्मिमालाकुलम्' का समास विग्रह बताइये ।
3. मधुरसूक्तियों से किसे मार्ग पर नहीं लाया जा सकता ?
4. मौन किसका आभूषण है ?
5. 'लभेत सिकतासु तैलमपि' श्लोक की व्याख्या कीजिए।

13.3 सारांश

नीतिशतक के प्रारम्भ में भर्तृहरि ने प्रकाशस्वरूप परब्रह्म की वन्दना की है। तदन्तर उन्होंने काम की निस्सारता का प्रतिपादन किया है। उन्होंने कहा है कि अज्ञव्यक्ति को बिना किसी परिश्रम के प्रसन्न किया जा सकता है तथा विशिष्ट विद्वान् को कुछ परिश्रम के साथ भी समझाया जा सकता है किन्तु स्वल्प ज्ञान से भयंकर मूर्ख को समझा पाना सम्भव नहीं है। कोई भी व्यक्ति कठिन से कठिन कार्य कर सकता है किन्तु दुराग्रही मूर्ख को प्रसन्न नहीं कर सकता । लोक का उदाहरण देते हुये भर्तृहरि कहते हैं कि कोई बालू से तेल भी निकाल सकता है, मृगमरीचिका में पानी भी पा सकता है, इधर-उधर घूमता हुआ खरगोश का सींग भी पा सकता है किन्तु हठी मूर्ख को प्रसन्न नहीं कर सकता। मूर्ख की निन्दा करते हुये उन्होंने उसे विद्वानों की सभा में मौन रहने का ही सुझाव दिया है। 'अल्पविद्या भयंकरी' के सिद्धान्त को उन्होंने स्पष्ट किया है। उनका कहना है कि जब मैं अल्पज्ञ था तब मैं हाथी की तरह मतवाला हो रहा था कि मेरे समान और कोई विद्वान् नहीं है किन्तु जब विद्वानों के पास जाकर मैंने कुछ ज्ञान अर्जित किया तब मुझे पता चला कि मैं मूर्ख हूँ और मेरा अहंकार ज्वर की तरह उतर गया। उन्होंने मूर्ख की अनेक प्रकार से निन्दा करते हुये यह शिक्षा दी है कि हमें कभी भी मूर्खता का आचरण नहीं करना चाहिये।

13.4 शब्दावली

दिक्काल = पूर्व आदि दिशायें तथा भूत, वर्तमान, भविष्य आदि काल ।

चिन्मात्रमूर्तये = चैतन्य विग्रह वाले ।

स्वानुभूत्येकमानाय = अनुभव मात्र से गम्य ।

अन्यसक्तः = दूसरी पर आसक्त है।

ज्ञानलवदुर्विदग्धम् = अल्प ज्ञान वाले।

प्रसह्य = शक्तिपूर्वक।

सुधास्यन्दिभिः = अमृत बरसाने वाली।

किंचिज्ज्ञः = अल्पज्ञानी ।

बुधजनसकाशात् = विद्वानों के समागम से।

कृमिकुलचितम् = कीड़ों के समूह से परिपूर्ण।

परिग्रहफल्गुताम् = प्राप्त की हुई वस्तुओं की निस्सारता को।

पशुपतिशिरस्तः = शिवजी के शिर से।

उत्तुङ्गात् = ऊँचाई वाले।

विनिपातः = पतन (अधोगति की प्राप्ति)।

13.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भर्तृहरिशतकत्रयम्, सम्पादकः – पु. गोपीनाथ, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2010।
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, कस्तूरबा नगर, सिगरा, वाराणसी, 2001
3. वृत्तरत्नाकरः, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।
4. अमरकोश, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, 2011।
5. संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009।

13.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–

1. (i) सही (ii) गलत (iii) गलत
   (iv) गलत (v) सही (vi) सही

अभ्यास प्रश्न–

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखे।

इकाई 14 नीतिशतकम् (श्लोक 11-20)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 काव्यांश की व्याख्या

14.2.1 मूर्ख की औषधि का अभाव

14.2.2 साहित्य और संगीत आदि की प्रशंसा

14.2.3 विद्या आदि का महत्त्व

14.2.4 मूर्ख संसर्ग का निषेध

14.2.5 विद्वानों के सम्मान का प्रस्ताव

14.2.6 विद्या का महत्त्व

14.2.7 विद्वानों का संरक्षण

14.2.8 गुणों की दुरपवारता

14.2.9 सर्वोत्तम आभूषण

14.2.10 सर्वोत्तम धन

14.3 सारांश

14.4 शब्दावली

14.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- भर्तृहरि के द्वारा प्रतिपादित मूर्खता के लक्षणों को समझ सकेंगे।
- मूर्खता की कोई औषधि नहीं है, यह जान सकेंगे।
- जीवन में साहित्य, संगीत और कला के महत्त्व को जान सकेंगे।
- विद्या और तप आदि से रहित मनुष्य की पशुता को जान सकेंगे।
- विद्वानों के महत्त्व को जान सकेंगे।
- विद्या ही सबसे बड़ा धन है, यह जान सकेंगे।
- विभिन्न शब्दों के सन्धि और समासों को जान सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई में आपने नीतिशतक की मूर्ख पद्धति के 10 श्लोकों का अध्ययन किया। आपने जाना कि संसार का कठिन से कठिन कार्य कर पाना सम्भव है किन्तु मूर्खजन को प्रसन्न

करना अतिदुष्कर है। आपने यह भी जाना कि विद्या मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा धन है। प्रस्तुत इकाई में आप मूर्ख पद्धति के कुछ श्लोक तथा विद्वत्पद्धति के कुछ श्लोकों का अध्ययन करेंगे। भर्तृहरि की कविता हमारे व्यावहारिक पक्षों से अपने कथ्य का सशक्त सम्प्रेषण करती है। उन्होंने अनेक ऐसे तथ्य उपस्थापित किये हैं जिससे उनका कथ्य स्वयमेव पाठक के समक्ष अपने रहस्य का उद्घाटन कर देता है। भर्तृहरि कहते हैं कि प्रचण्ड आग भी जल से बुझाई जा सकती है। छाते से प्रचण्ड धूप का भी वारण हो सकता है। अंकुश से मतवाला हाथी भी वश में किया जा सकता है। मन्त्र प्रयोग से विष पर भी विजय पायी जा सकती है किन्तु मूर्ख को वश में करने की कोई दवा नहीं है। वे साहित्य और संगीत आदि से रहित व्यक्ति को पशु ही मानते हैं। जिनके पास विद्या नहीं है, तप और दान आदि नहीं है, ऐसे मनुष्य भी पशु ही हैं। उनका यह भी कहना है कि पर्वत और जंगलों में भटकना ठीक है किन्तु मूर्ख के साथ इन्द्र के भवन में भी रहना उचित नहीं है। विद्या की प्रशंसा करते हुये, उनका कहना है कि यह धन चोरी करने वाले को भी दृष्टिगत नहीं होता, अत्यधिक आनन्द की सृष्टि करता है, सतत दान देने से भी नष्ट नहीं होता। राजाओं को ललकारते हुये भर्तृहरि कहते हैं कि विद्वान् पण्डितों की अवमानना करना उचित नहीं है क्योंकि लक्ष्मी के बल से उन्हें कोई उसी तरह नहीं रोक सकता, जिस तरह मतवाले हाथी को मृणालतन्तु से रोक पाना सम्भव नहीं होता।

प्रस्तुत इकाई में आप नीतिशतक के 11-20 पद्यों का अध्ययन करेंगे।

14.2 काव्यांश की व्याख्या

14.2.1 मूर्ख की औषधि का अभाव

शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक् छत्रेण सूर्यातपो
नागेन्द्रो निशिताङ्कुशेन समदो दण्डेन गोगर्दभौ।
व्याधिर्भेषजसङ्ग्रहैश्च विविधैर्मन्त्रप्रयोगैर्विषं
सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्रविहितं मूर्खस्य नास्त्यौषधम्।।11।।

प्रसंग – नीतिकार भर्तृहरि ने प्रस्तुत पद्य में कहा है कि सूर्य के आतप आदि का उपचार है किन्तु मूर्ख (अज्ञानी) मनुष्य का कोई उपचार नहीं है।

अन्वयः – हुतभुक् जलेन, सूर्यातपः छत्रेण, समदः नागेन्द्रः निशिताङ्कुशेन वारयितुं शक्यः गोगर्दभौ दण्डेन, व्याधिः भेषजसङ्ग्रहैः, विषं विविधैः मन्त्रप्रयोगैः (च वारयितुं शक्यते) सर्वस्य शास्त्रविहितम् औषधम् अस्ति। (किन्तु) मूर्खस्य औषधं नास्ति।

शब्दार्थ – हुतभुक् = अग्नि, जलेन = जल से, सूर्यातपः = सूर्य की तपन, छत्रेण = छाते से, समदः = मदमत्त, नागेन्द्रः = हाथी, निषिताङ्कुशेन = तीखे अंकुश से, वारयितुं शक्यः = वश में कर सकते हैं, गोगर्दभौ = सांड़ और गधे को, दण्डेन = डण्डे से, व्याधिः = रोग, भेषजसङ्ग्रहैः = औषधियों के समूह से, विषम् = विष (जहर), विविधैः मन्त्रप्रयोगैः = अनेक प्रकार के मन्त्र प्रयोगों से, सर्वस्य = सभी का, शास्त्रविहितम् = शास्त्रों के द्वारा विहित, औषधम् = उपचार, अस्ति = है, किन्तु, मूर्खस्य = अज्ञानी, औषधम् = उपचार, नास्ति = नहीं है।

सन्धि –

सूर्यातपः – सूर्य + आतपः (दीर्घ सन्धि)

नागेन्द्रः – नाग + इन्द्रः (गुण सन्धि)

निशिताङ्कुशेन – निशित + अङ्कुशेन (दीर्घ सन्धि)

व्याधिर्भेषजसङ्ग्रहैः – व्याधिः + भेषजसङ्ग्रहैः (विसर्ग सन्धि)

सङ्ग्रहैश्च – सङ्ग्रहैः + च (श्चुत्व सन्धि)

विविधैर्मन्त्रप्रयोगैः – विविधैः + मन्त्रप्रयोगैः (विसर्ग सन्धि)

प्रयोगैर्विषम् – प्रयोगैः + विषं (विसर्ग सन्धि)

सर्वस्यौषधम् – सर्वस्य + औषधम् (वृद्धि सन्धि)

नास्त्यौषधम् – नास्ति + औषधम् (यण् सन्धि)

समास –

हुतभुक् – हुतं भुनक्तीति हुतभुक् (कर्मधारय समास)

सूर्यातपः – सूर्यस्य आतपः (षष्ठी तत्पुरुष समास)

नागेन्द्रः – नागानाम् इन्द्रः (षष्ठी तत्पुरुष समास)

निशिताङ्कुशेन – निशितः अङ्कुशः निशिताङ्कुशः (कर्मधारय समास) तेन

गोगर्दभौ – गौश्च गर्दभश्च (द्वन्द्व समास)

भेषजसङ्ग्रहैः – भेषजानां संग्रहः भेषजसंग्रहः (षष्ठी तत्पुरुष समास) तैः

मन्त्रप्रयोगैः – मन्त्राणां प्रयोगः मन्त्रप्रयोगः (षष्ठी तत्पुरुष समास) तैः

शास्त्रविहितम् – शास्त्रेषु विहितं (सप्तमी तत्पुरुष समास)

अनुवाद – अग्नि को जल से, सूर्य की तपन को छाते से, मदमत्त हाथी को तीखे अंकुश से, सांड़ और गधे को डण्डे से वश में कर सकते हैं। रोग का औषधियों के समूह से, जहर का अनेक प्रकार के मन्त्र प्रयोगों से उपचार किया जा सकता है। सभी का शास्त्रों के अनुसार विहित उपचार है परन्तु मूर्ख (अज्ञानी) मनुष्य का कोई उपचार नहीं है।

छन्द – शार्दूलविक्रीडित।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.2 साहित्य और संगीत आदि की प्रशंसा

साहित्यसङ्गीतकलाविहीनस्साक्षात्पशुः पुच्छविषाणहीनः।
तृणं न खादन् अपि जीवमानस्तद्भागधेयं परमं पशूनाम्।।12।।

प्रसंग – भर्तृहरि ने प्रस्तुत श्लोक में साहित्य, संगीत आदि के महत्त्व को बताते हुये उससे रहित मनुष्य को साक्षात् पशु की संज्ञा दी है।

अन्वयः – साहित्यसङ्गीतकलाविहीनः (मानवः) साक्षात् पुच्छविषाणहीनः पशुः (भवति) (सः) तृणं न खादन् अपि जीवमानः (वर्तते इति) तत् पशूनां परमं भागधेयं भवति।

शब्दार्थ – साहित्यसङ्गीतकलाविहीनः = साहित्य, संगीत आदि कलाओं से अनभिज्ञ मनुष्य, साक्षात् = प्रत्यक्ष रूप से ही, पुच्छविषाणहीनः = पूंछ और सींग के बिना, पशुः = जानवर, (भवति = होते हैं), (सः = वह), तृणम् = भूसा इत्यादि, न खादन् अपि = न खाते हुये भी, जीवमानः = जीवित रहता है, तत् = वह, पशूनाम् = पशुओं के लिए, परमम् = अत्यधिक, भागधेयम् = सौभाग्य की बात है।

सन्धि –

जीवमानस्तत् – जीवमानः + तत् (विसर्ग सन्धि)

समास –

साहित्यसङ्गीतकलाविहीनः – साहित्यसङ्गीतयोः कलाः साहित्यसङ्गीतकलाः (षष्ठी तत्पुरुष समास), साहित्यसङ्गीतकलाभिः विहीनः (तृतीया तत्पुरुष समास)

पुच्छविषाणहीनः – पुच्छश्च विषाणौ च पुच्छविषाणाः (द्वन्द्व समास) तैः हीनः (तृतीया तत्पुरुष समास)

अनुवाद – साहित्य, संगीत आदि मन को आनन्द देने वाली कलाओं से अनभिज्ञ मनुष्य प्रत्यक्ष रूप से ही पूंछ और सींग के बिना जानवर होते हैं। वह भूसा इत्यादि न खाते हुये भी जीवित रहता है, यह पशुओं के लिए अत्यधिक सौभाग्य की बात है। अर्थात् वह मनुष्य पशुओं का चारा खाये बिना ही पशुओं के समान जीवन व्यतीत कर रहें हैं जिससे भाग्यवश पशुओं का चारा बच रहा है।

छन्द – उपजाति।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.3 विद्या आदि का महत्त्व

येषां न विद्या न तपो न दानं ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूताः मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।13।।

प्रसंग – इस पद्य में विद्या आदि से रहित मनुष्य को पशु के समान प्रतिपादित किया गया है।

अन्वयः – येषां विद्या न, तपः न, दानं न, ज्ञानं न, शीलं न, गुणः न, धर्मः न (अस्ति) ते भुवि मर्त्यलोके भारभूताः (सन्तः) मनुष्यरूपेण (विद्यमानाः) मृगाः (इव) चरन्ति।

शब्दार्थ – येषाम् = जिस मनुष्य के (पास), विद्या न = व्याकरण साहित्यादि शास्त्रों का ज्ञान नहीं है, तपः न = तपस्या नहीं है, दानं न = दान नहीं है, ज्ञानं न = विवेक नहीं है, शीलं न = शीलवान् नहीं है, गुणः न = दयादाक्षिण्यादि गुण नहीं है, धर्मः न = शास्त्रों में वर्णित धर्म नहीं है, ते = वे मनुष्य, भुवि = धरती पर, मर्त्यलोके = मृत्युलोक में (इस मनुष्य लोक में), भारभूताः = भार के रूप में, मनुष्यरूपेण = मानव के रूप में, मृगाः = पशु (के समान), चरन्ति = भ्रमण करते हैं।

सन्धि –

मृगाश्चरन्ति – मृगाः + चरन्ति (श्चुत्व सन्धि)

समास –

मर्त्यलोके – मर्त्यानां लोकः मर्त्यलोकः (षष्ठी तत्पुरुष समास)तस्मिन्

मनुष्यरूपेण – मनुष्याणां रूपं मनुष्यरूपम् (षष्ठी तत्पुरुष समास)

अनुवाद – जिस मानव में व्याकरण साहित्यादि शास्त्रों का ज्ञान नहीं है, तप आदि नहीं है, दान नहीं है, विवेक नहीं है, सदाचार नहीं है, दयादाक्षिण्यादि गुण नहीं है, शास्त्रों में वर्णित धर्म नहीं है, वे मनुष्य इस धरा पर (मृत्युलोक में) भार हैं एवं मानव के रूप में पशु के समान भ्रमण करते हैं।

छन्द – उपजाति।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.4 मूर्ख संसर्ग का निषेध

वरं पर्वतदुर्गेषु भ्रान्तं वनचरैः सह।
न मूर्खजनसम्पर्कः सुरेन्द्रभवनेष्वपि।।14।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य के माध्यम से कवि ने पर्वत और दुर्गों में भटकने को श्रेष्ठ माना है किन्तु इन्द्र के भवन में भी मूर्खों के सम्पर्क का निषेध किया है।

अन्वयः – वनचरैः सह पर्वतदुर्गेषु भ्रान्तं वरं (परन्तु) सुरेन्द्रभवनेषु अपि मूर्खजनसम्पर्कः न (वरम्)।

शब्दार्थ – वनचरैः = वनों में भ्रमण करने वाले जंगली भील आदि के, सह = साथ, पर्वतदुर्गेषु = पहाड़ों के विकट स्थानों में, भ्रान्तम् = भ्रमण, वरम् = सही है, सुरेन्द्रभवनेषु अपि = देवराज इन्द्र के महलों में भी, मूर्खजनसम्पर्कः = अज्ञानी व्यक्ति से व्यवहार, न = नहीं।

सन्धि –

सुरेन्द्रभवनेष्वपि – सुरेन्द्रभवनेषु + अपि (यण् सन्धि)

समास –

पर्वतदुर्गेषु – पर्वताः दुर्गाणि च पर्वतदुर्गाणि (द्वन्द्व समास) तेषु

वनचरैः – वने चरन्तीति वनचराः (सप्तमी तत्पुरुष समास) तैः

मूर्खजनसम्पर्कः – मूर्खः च असौ जनः च मूर्खजनः (कर्मधारय समास), मूर्खजनानां सम्पर्कः (षष्ठी तत्पुरुष समास)

सुरेन्द्रभवनेषु – सुराणाम् इन्द्रः सुरेन्द्रः (षष्ठी तत्पुरुष समास) सुरेन्द्रस्य भवनानि सुरेन्द्रभवनानि (षष्ठी तत्पुरुष समास) तेषु

अनुवाद – वनों में भ्रमण करने वाले जंगली भील आदि के साथ पहाड़ों के विकट स्थानों में भ्रमण करना सही है किन्तु देवराज इन्द्र के महलों में भी मूर्ख व्यक्ति का साथ मंगलकारी नहीं है।

छन्द – अनुष्टुप्।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.5 विद्वानों के सम्मान का प्रस्ताव

शास्त्रोपस्कृतशब्दसुन्दरगिरः शिष्यप्रदेयागमा
विख्याताः कवयो वसन्ति विषये यस्य प्रभोर्निर्धनाः।
तज्जाड्यं वसुधाधिपस्य कवयो ह्यर्थं विनापीश्वराः
कुत्स्याः स्युः कुपरीक्षका हि मणयो यैरर्घतः पातिताः।।15।।

प्रसंग – नीतिशतकम् के प्रथम चौदह श्लोकों में मूर्खों के लक्षण का प्रतिपादन किया गया है। अतः उन्हें मूर्ख पद्धति की संज्ञा दी गई है। प्रस्तुत पद्य से विद्वानों के लक्षण का प्रतिपादन किया गया है अतः यह विद्वत्पद्धति का प्रथम पद्य है। इसमें जिस राजा के राज्य में विद्वान् दरिद्रता का अनुभव करते हैं उस राजा की निन्दा की गई है।

अन्वयः – शास्त्रोपस्कृतशब्दसुन्दरगिरः शिष्यप्रदेयागमाः विख्याताः कवयः यस्य प्रभोः विषये निर्धनाः वसन्ति तत् वसुधाधिपस्य जाड्यं हि। कवयः अर्थं विना अपि ईश्वराः (भवन्ति) हि कुपरीक्षकाः कुत्स्याः स्युः यैः मणयः अर्घतः पातिताः।

शब्दार्थ – शास्त्र = न्याय और व्याकरणादि शास्त्रों से, उपस्कृत = परिनिष्ठ, शब्द = शब्दों से, सुन्दरगिरः = मधुर वाणी वाले, शिष्य = छात्रों को, प्रदेय = प्रदान करने योग्य, आगमाः = शास्त्रों के रहस्य वाले, विख्याताः = सुप्रसिद्ध, कवयः = ज्ञानी लोग, यस्य प्रभोः = जिस राजा के, विषये = देश में, निर्धनाः = निर्धन होकर, वसन्ति = निवास करते हैं, तत् = वह, वसुधाधिपस्य = भूपति की, जाड्यं हि = अज्ञानी ही है, कवयः = ज्ञानी लोग तो, अर्थम् = धन के, विना अपि = रहित भी, ईश्वराः = योग्य हैं, हि = क्योंकि, कुपरीक्षकाः = उचित परीक्षण न करने वाले, कुत्स्याः स्युः = निन्दा योग्य हैं, यैः = जिनके द्वारा, मणयः = बहुमूल्य रत्न, अर्घतः = मूल्य से, पातिताः = गिराये गये हैं।

सन्धि –

वसुधाधिपस्य – वसुधा + अधिपस्य (दीर्घ सन्धि)

समास –

शास्त्रोपस्कृतशब्दसुन्दरगिरः – शास्त्रैः उपस्कृताः (तृतीया तत्पुरुष समास) शास्त्रोपस्कृताः, शास्त्रोपस्कृतैः शब्दैः सुन्दरा गीः येषां (बहुव्रीहिः समास) ते

शिष्यप्रदेयागमाः – शिष्येभ्यः प्रदेयाः (चतुर्थी तत्पुरुष समास) शिष्यप्रदेयाः, शिष्यप्रदेयाः आगमाः येषां (बहुव्रीहि समास) ते

निर्धनाः – निर्गतं धनं येभ्यः ते (बहुव्रीहि समास)

वसुधाधिपस्य – वसुधायाः अधिपः (षष्ठी तत्पुरुष समास) वसुधाधिपः तस्य

कुपरीक्षकाः – कुत्सिताः परीक्षकाः (कर्मधारय समास)

अनुवाद – न्याय और व्याकरणादि शास्त्रों से परिनिष्ठ शब्दों से मधुर वाणी वाले तथा छात्रों को प्रदान करने योग्य शास्त्रों के रहस्य वाले सुप्रसिद्ध ज्ञानी लोग यदि किसी राजा

के देश में निर्धन होकर निवास करते हैं तो वह राजा ही अज्ञानी है। ज्ञानी लोग तो धन से रहित भी सम्पन्न ही हैं। क्योंकि रत्न का उचित परीक्षण न करने वाले परीक्षक ही निन्दा योग्य हैं जिनके द्वारा बहुमूल्य रत्न मूल्य से गिराये गये हैं, न कि वह रत्न।

छन्द – शार्दूलविक्रीडित।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.6 विद्या का महत्त्व

हर्तुर्याति न गोचरं किमपि शं पुष्णाति यत्सर्वदा-
प्यर्थिभ्यः प्रतिपाद्यमानमनिशं प्राप्नोति वृद्धिं पराम्।
कल्पान्तेष्वपि न प्रयाति निधनं विद्याख्यमन्तर्धनं
येषां तान्प्रति मानमुज्झत नृपाः कस्तैः सह स्पर्धते।।16।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में विद्या के महत्त्व को बताते हुये विद्वानों के प्रति राजाओं को स्पर्धा भाव त्यागने की सलाह दी गई है।

अन्वयः – हे नृपाः! यत् हर्तुः गोचरं न याति, सर्वदा किम् अपि शं पुष्णाति, अर्थिभ्यः अनिशं प्रतिपाद्यमानम् अपि परां वृद्धिं प्राप्नोति कल्पान्तेषु अपि निधनं न प्रयाति (एतादृशं) विद्याख्यम् अन्तर्धनं येषाम् अस्ति तान् प्रति मानम् उज्झत। तैः सह कः स्पर्धते ?

शब्दार्थ – हे नृपाः! = हे राजागण!, यत् = जो धन, हर्तुः = चोरी करने वाले के, गोचरं न याति = दृष्टिगत नहीं होने वाले, सर्वदा = सदा, किम् अपि = अनिर्वचनीय, शम् = आनन्द की, पुष्णाति = वृद्धि करता है, अर्थिभ्यः = मांगने वालों के लिए, अनिशम् = लगातार, प्रतिपाद्यमानम् अपि = दिया जाता हुआ भी, पराम् = अत्यधिक, वृद्धिम् = अधिकता को, प्राप्नोति = प्राप्त करता है, कल्पान्तेषु अपि = प्रलय-काल में भी, निधनम् = विनाश को, न प्रयाति = प्राप्त नहीं होता, विद्याख्यम् = वह विद्या नामक, अन्तर्धनम् = छिपा हुआ धन, येषाम् = जिन ज्ञानियों का, अस्ति = है, तान् प्रति = उनके लिए, मानम् = गर्व करना, उज्झत = त्याग दो, तैः सह = उन ज्ञानियों के साथ, कः = कौन मानव, स्पर्धते = प्रतिस्पर्धा कर सकता है।

सन्धि –

हर्तुर्याति – हर्तुः + याति (विसर्ग सन्धि)
सर्वदापि – सर्वदा + अपि (दीर्घ सन्धि)
अप्यर्थिभ्यः – अपि + अर्थिभ्यः (यण् सन्धि)
कल्पान्तेष्वपि– कल्पान्तेषु + अपि (यण् सन्धि)
विद्याख्यम् – विद्या + आख्यम् (दीर्घ सन्धि)
कस्तैः – कः + तैः (विसर्ग सन्धि)

समास –

कल्पान्तेषु – कल्पानाम् अन्तः कल्पान्तः (षष्ठी तत्पुरुष समास) तेषु
विद्याख्यम् – विद्या आख्या यस्य तत् (बहुव्रीहि समास)

अनुवाद – हे राजागण! जो धन चोरी करने वाले चोर को भी दृष्टिगत नहीं होता है, जो सदा अनिर्वचनीय आनन्द की वृद्धि करता है, जो मांगने वालों के लिए लगातार दिया जाता हुआ भी अत्यधिक वृद्धि को प्राप्त करता रहता है तथा जो प्रलय-काल में भी विनाश को प्राप्त नहीं होता है, ऐसा वह विद्या नामक छिपा हुआ धन, जिन ज्ञानियों का है, उनके समक्ष गर्व करना त्याग दो, उन ज्ञानियों के साथ भला कौन मानव प्रतिस्पर्धा कर सकता है?

छन्द – शार्दूलविक्रीडित।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.7 विद्वानों का संरक्षण

अधिगतपरमार्थान् पण्डितान् मावमंस्थाः
तृणमिव लघु लक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि।
अभिनवमदलेखाश्यामगण्डस्थलानां
न भवति बिसतन्तुर्वारणं वारणानाम्।।17।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में नीतिकार ने विद्वानों के संरक्षण एवं आदर करने की शिक्षा राजाओं को दी है।

अन्वयः – अधिगतपरमार्थान् पण्डितान् मा अवमंस्थाः, लक्ष्मीः लघु तृणम् इव तान् न एव संरुणद्धि, बिसतन्तुः अभिनवमदलेखाश्यामगण्डस्थलानां वारणानां वारणं न भवति।

शब्दार्थ – अधिगतपरमार्थान् = परमार्थ को अधिग्रहीत करने वाले, पण्डितान् = ज्ञानियों का, मा अवमंस्थाः = अनादर मत करो, लक्ष्मीः = सम्पत्ति, लघु = तुच्छ, तृणम् इव = तिनके के समान, तान् = उन्हें, न एव = नहीं, संरुणद्धि = रोक सकता, बिसतन्तुः = कमल का रेशा, अभिनव = नवीन, मदलेखा = मदरेखा से, श्याम = सांवले, गण्डस्थलानाम् = कपोलों वाले, वारणानां = हाथियों को, वारणम् = रोकने वाला, न भवति = नहीं होता।

सन्धि –

मावमंस्थाः	–	मा + अवमंस्थाः (दीर्घ सन्धि)
अवमंस्थास्तृणम्	–	अवमंस्थाः + तृणम् (विसर्ग सन्धि)
लक्ष्मीर्न	–	लक्ष्मीः + न (विसर्ग सन्धि)
नैव	–	न + एव (वृद्धि सन्धि)
तन्तुर्वारणम्	–	तन्तुः + वारणम् (विसर्ग सन्धि)

समास –

अधिगतपरमार्थान्	–	अधिगतः परमार्थः यैः ते अधिगतपरमार्थाः (बहुव्रीहि समास) तान्
बिसतन्तुः	–	बिसस्य तन्तुः (षष्ठी तत्पुरुष समास)

अभिनवमदलेखाश्यामगण्डस्थलानाम् – अभिनवा चैव मदलेखा च अभिनवमदलेखा (कर्मधारय समास) अभिनवमदलेखया श्यामानि अभिनवमदलेखाश्यामानि (तृतीया तत्पुरुष समास) अभिनवमदलेखाश्यामानि गण्डस्थलानि येषां ते, अभिनवमदलेखाश्यामगण्डस्थलाः, तेषाम् (बहुव्रीहि समास)

अनुवाद – (हे राजन्) परमार्थ करने वाले ज्ञानियों का अनादर मत करो, उनके लिये धन तुच्छ तिनके के समान है, उससे उन्हें नहीं रोका जा सकता। ठीक वैसे ही जैसे कमल का रेशा नवीन मदरेखा से मदमत्त सांवले कपोलों वाले हाथियों को रोक नहीं सकता। अर्थात् हे राजन् शास्त्रों के ज्ञान से परोपकार में लीन विद्वानों का अपमान मत करो क्योंकि उनके लिये धन एक तुच्छ तिनके के समान है। अतः उन्हें उससे वश में नहीं किया जा सकता। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार नवीन मदरेखा से काले कपोलों वाले मदमत्त हाथी को कमलनाल से बाँधकर नहीं रोका जा सकता।

छन्द – मालिनी।

लक्षणम् – ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः।

इस छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, नगण, मगण, यगण, यगण होते हैं तथा आठवें और अन्त वर्ण में विराम होता है।

14.2.8 गुणों की दुरपवारता

अम्भोजिनीवनविहारविलासमेव
हंसस्य हन्ति नितरां कुपितो विधाता।
न त्वस्य दुग्धजलभेदविधौ प्रसिद्धां
वैदग्ध्यकीर्तिमपहर्तुमसौ समर्थः।।18।।

प्रसंग – इस पद्य में सहज गुण के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है। कवि ने कहा है कि सहज गुण को विधाता भी दूर नहीं कर सकता।

अन्वयः – नितरां कुपितः विधाता हंसस्य अम्भोजिनीवनविहारविलासम् एव हन्ति। अस्य दुग्धजलभेदविधौ प्रसिद्धां वैदग्ध्यकीर्तिम् अपहर्तुं तु असौ न समर्थः।

शब्दार्थ – नितराम् = अत्यन्त, कुपितः = क्रोधित होने पर भी, विधाता = ब्रह्मा, हंसस्य = हंस के, अम्भोजिनीवनविहारविलासम् = कमलिनी वन में क्रीड़ा करने के आनन्द को ही, हन्ति = समाप्त कर सकता है, अस्य = इस (राजहंस की), दुग्धजलभेदविधौ = दुग्ध और जल को पृथक् करने की विधि में, प्रसिद्धाम् = विख्यात, वैदग्ध्यकीर्तिम् = चातुर्य के यश को, अपहर्तुम् = अपहरण करने में, तु = किन्तु, असौ = ब्रह्माजी, न समर्थः = असमर्थ हैं।

सन्धि –

त्वस्य – तु + अस्य (यण् सन्धि)

समास –

अम्भोजिनीवनविहारविलासम् – अम्भोजिनीनां वनम् (षष्ठी तत्पुरुष समास) अम्भोजिनीवनम्, अम्भोजिनीवने विहारः अम्भोजिनीवनविहारः (सप्तमी तत्पुरुष समास), अम्भोजिनीवनविहारस्य विलासः अम्भोजिनीवनविहारविलासः, (षष्ठी तत्पुरुष समास) तम्

दुग्धजलभेदविधौ – दुग्धं च जलं च (द्वन्द्वसमास) दुग्धजले दुग्धजलयोः भेदः (षष्ठी तत्पुरुष समास) दुग्धजलभेदः, दुग्धजलभेदस्य विधिः (षष्ठी तत्पुरुष समास) दुग्धजलभेदविधिः तस्मिन्

वैदग्ध्यकीर्तिम् – वैदग्ध्येन कीर्तिः (तृतीया तत्पुरुष समास) वैदग्ध्यकीर्तिः, ताम्

अनुवाद – यदि ब्रह्मा जी हंस पर अत्यन्त क्रोधित भी हो जायें तो अधिक से अधिक उसके कमलिनी वन में क्रीड़ा करने के आनन्द में ही बाधा उत्पन्न कर सकते हैं। परन्तु दुग्ध और जल को पृथक् करने की विधि में हंस के चातुर्य के विख्यात यश को छीन पाने में तो ब्रह्माजी भी असमर्थ हैं। (इसी प्रकार यदि राजा क्रोधित हो तो अधिक से अधिक विद्वान् की सम्पत्ति को ही छीन सकता है, परन्तु उसके वैदुष्य को नहीं छीन सकता।)

छन्द – वसन्ततिलका।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.9 सर्वोत्तम आभूषण

केयूराणि न भूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वलाः
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालङ्कृता मूर्धजाः।
वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्।।19।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में केयूर आदि आभूषणों की अपेक्षा विद्या को सर्वश्रेष्ठ आभूषण बताया गया है।

अन्वयः – केयूराणि पुरुषं न भूषयन्ति, चन्द्रोज्ज्वलाः हाराः (पुरुषं) न (भूषयन्ति), स्नानं (पुरुषं) न (भूषयति), विलेपनं (पुरुषं) न (भूषयति), कुसुमं (पुरुषं) न (भूषयति), अलङ्कृताः मूर्धजाः (पुरुषं) न (भूषयन्ति), या संस्कृता धार्यते (सा) एका वाणी पुरुषं समलङ्करोति। भूषणानि खलु क्षीयन्ते। वाग्भूषणं सततं भूषणं (भवति)।

शब्दार्थ – केयूराणि = बाजूबन्द, पुरुषम् = मनुष्य को, न भूषयन्ति = शोभित नहीं करते, चन्द्रोज्ज्वलाः = चन्द्रमा की तरह चमकते हुए, हाराः = हार, न = नहीं, स्नानम् = स्नान, न विलेपनम् = न तो सुगन्धित तेल चन्दन आदि, न कुसुमम् = न तो पुष्पादि, न अलङ्कृताः = न सजाये हुए, मूर्धजाः = बाल, न = नहीं, या = जो, संस्कृता = सुसंस्कृत, धार्यते = मुख में विराजित की जाती है, एका = एकमात्र, वाणी = वाणी ही, पुरुषम् = मनुष्य विशेष को, समलङ्करोति = सुशोभित करती है, भूषणानि = केयूर आदि आभूषण, खलु क्षीयन्ते = अवश्य ही पतन को प्राप्त हो जाते हैं, वाग्भूषणम् = वाणी रूपी आभूषण, सततम् = सदा, भूषणम् = शोभा, भवति = होती है।

सन्धि –

चन्द्रोज्ज्वलाः	–	चन्द्र + उज्ज्वलाः (गुण सन्धि)
नालङ्कृता	–	न + अलङ्कृताः (दीर्घ सन्धि)
वाण्येका	–	वाणी + एका (यण् सन्धि)
वाग्भूषणम्	–	वाक् + भूषणम् (जश्त्व सन्धि)

समास –

चन्द्रोज्ज्वलाः	–	चन्द्रवत् उज्ज्वलाः (कर्मधारय समास)
वाग्भूषणम्	–	वाणी एव भूषणं (कर्मधारय समास)

अनुवाद – बाजूबन्द मनुष्य को शोभित नहीं करते, न ही चन्द्रमा की तरह चमकते हुए हार, न ही स्नान, न ही सुगन्धित तेल चन्दन आदि का लेप, न ही पुष्पादि, न ही सजाये हुए बाल

शरीर को सुन्दर बनाते हैं। मनुष्य के मुख में विराजमान सुसंस्कृत वाणी ही एकमात्र उस मनुष्य विशेष को सुशोभित करती है। अन्य केयूर आदि आभूषण अवश्य ही पतन को प्राप्त हो जाते हैं परन्तु वाणी रूपी आभूषण सदा शोभित रहते हैं।

छन्द – शार्दूलविक्रीडित।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

14.2.10 सर्वोत्तम धन

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं
विद्या भोगकरी यशःसुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवता
विद्या राजसु पूज्यते न हि धनं विद्याविहीनः पशुः।।20।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में विद्या के महत्त्व को बताते हुये विद्या से रहित व्यक्ति को पशु कहा गया है। विद्वान् की पूजा सर्वत्र होती है। किन्तु राजा केवल अपने राज्य में ही पूजा जाता है।

अन्वयः – विद्या नाम नरस्य अधिकं रूपं, प्रच्छन्नगुप्तं धनं, विद्या भोगकरी यशः सुखकरी, विद्या गुरूणां गुरुः, विद्या विदेशगमने बन्धुजनः, विद्या परं दैवता, विद्या राजसु पूज्यते धनं न हि (पूज्यते) विद्याविहीनः पशुः।

शब्दार्थ – विद्या नाम = विद्या नाम से प्रसिद्ध, नरस्य = मनुष्य का, अधिकम् = विशेष, रूपम् = सौन्दर्य, प्रच्छन्नगुप्तम् = छिपा हुआ, धनम् = सम्पत्ति, विद्या = विद्या, भोगकरी = भोगने योग्य पदार्थों को देने वाली, यशः सुखकरी = कीर्ति और आनन्द को देने वाली, विद्या = शिक्षा, गुरूणाम् = गुरुजनों की (भी), गुरुः = शिक्षक, विदेशगमने = परदेश जाने पर, बन्धुजनः = भाई-बन्धुओं की तरह (सहायता करने वाली), परम् = अत्यन्त, दैवतम् = देवता, राजसु = नृपों में, पूज्यते = पूजित होती है, धनम् = सम्पत्ति, न हि (पूज्यते) = नहीं पूजित (होता है), विद्याविहीनः = ज्ञान से रहित, पशुः = जानवर।

समास –

प्रच्छन्नगुप्तम् – प्रच्छन्नं च तत् गुप्तं च (कर्मधारय समास)

भोगकरी – भोगं करोति इति भोगकरी (नित्यसमास)

यशःसुखकरी – यशः च सुखं च यशः सुख, यशसुखं करोतीति – यशः सुखकरी (नित्यसमास)

विदेशगमने – विदेशेषु गमनं विदेशगमनं (सप्तमी तत्पुरुष समास) तस्मिन्

बन्धुजनः – बन्धुः च असौ जनः च बन्धुजनः (कर्मधारय समास)

विद्याविहीनः – विद्यया विहीनः, विद्याविहीनः (तृतीया तत्पुरुष समास)

अनुवाद – व्यक्ति का अनुपम स्वरूप, अत्यन्त गुप्त संपत्ति उसका ज्ञान ही है। विद्या ही भोग्य पदार्थों, कीर्ति तथा सुख को प्रदान करने वाली है। विद्या गुरुजनों की भी गुरु है। विदेश में जाने पर विद्या स्वजनों की भाँति सहायता करती है। वही सबसे बड़ा ईश्वर है। राजा लोग विद्या को ही आदर देते हैं, न कि धन को। अतः विद्या विहीन व्यक्ति पशु समान ही है।

छन्द – शार्दूलविक्रीडित।

लक्षणम् – पूर्ववत्।

बोध प्रश्न

1. साहित्य, संगीत आदि से रहित व्यक्ति कैसा होता है ?
2. जिसके पास विद्या नहीं है, वह मनुष्य क्या है ?
3. कौन सा धन कभी नष्ट नहीं होता है ?
4. राजा लोग किसको आदर देते हैं ?
5. कौन सा आभूषण सदा शोभित रहता है ?

अभ्यास प्रश्न

1. 'शक्यो वारयितुं..... इत्यादि पद्य की व्याख्या कीजिये।
2. 'मर्त्यलोके' शब्द में कौन सा समास है ?
3. 'अम्भोजिनीवनविहार' इत्यादि श्लोक का आशय क्या है ?
4. राजा लोग किसको आदर देते हैं ?
5. 'वाग्भूषणं भूषणं' की व्याख्या कीजिये।

14.3 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि साहित्य, संगीत और कला से रहित मनुष्य साक्षात् पशु है। वह भूसा नहीं खाता, यह पशुओं के सौभाग्य की बात है। भर्तृहरि जीवन में विद्या, तप, दान, ज्ञान, शील, गुण और धर्म के महत्त्व का प्रतिपादन करते हैं। उन्हें मूर्ख के साथ इन्द्र की सभा में भी रहना उचित नहीं लगता है। राजाओं को उन्होंने शिक्षा दी है कि जिनकी वाणी शास्त्रों से उपस्कृत है तथा शिष्यों को देने योग्य विद्या है, ऐसे विद्वान् जिस राजा के राज्य में निर्धन होते हैं, वह राजा ही अज्ञानी है। विद्या कभी चोर को दिखाई नहीं देती, प्रलय काल में भी नष्ट नहीं होती, वह ज्ञानियों का छिपा हुआ धन है, इसलिये राजाओं को विद्वानों के सामने गर्व नहीं करना चाहिये। उन्हें विद्वानों का अपमान भी नहीं करना चाहिये। विद्वज्जन लक्ष्मी के वश में नहीं होते, लक्ष्मी एक तिनका है तथा तिनके से मतवाले हाथी को नहीं रोका जा सकता। विद्वत्ता ऐसा गुण है कि ब्रह्मा भी उसे विद्वान् से दूर नहीं कर सकता। भर्तृहरि कहते हैं कि मनुष्य बाजूबन्द आदि आभूषणों से सुशोभित नहीं होता, संस्कार युक्त वाणी ही सबसे बड़ा आभूषण है। विद्या ही मनुष्य की सबसे बड़ी सम्पत्ति है, वही उन्हें सुख और यश प्रदान करती है। वह गुरूजनों की भी गुरू है। राजागण विद्या को ही सम्मान देते हैं, इसीलिये विद्या से रहित व्यक्ति पशु है।

14.4 शब्दावली

हुतभुक्	=	अग्नि
भेषजसङ्ग्रहैः	=	औषधियों के समूह से
गोगर्दभौ	=	सांड़ और गधे को
पुच्छविषाणहीनः	=	पूंछ और सींग के बिना
भागधेयम्	=	सौभाग्य की बात है
भुवि	=	धरती पर

भारभूताः	=	भार के रूप में
सुरेन्द्रभवनेषु अपि	=	देवराज इन्द्र के महलों में भी
उपस्कृत	=	परिनिष्ठ
जाड्यं हि	=	अज्ञानी ही है
कुत्स्याः स्युः	=	निन्दा योग्य हैं
अर्घतः	=	मूल्य से
गोचरं न याति	=	दृष्टिगत नहीं होने वाले
अनिशम्	=	लगातार
कल्पान्तेषु अपि	=	प्रलय-काल में भी
बिसतन्तुः	=	कमल का रेशा
वारणम्	=	रोकने वाला
संरुणद्धि	=	रोक सकता
वैदग्ध्यकीर्तिम्	=	चातुर्य के यश को
हन्ति	=	समाप्त कर सकता है
मूर्धजाः	=	बाल
विलेपनम्	=	सुगन्धित तेल चन्दन आदि
प्रच्छन्नगुप्तम्	=	छिपा हुआ

14.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भर्तृहरिशतकत्रयम्, सम्पादकः – पु. गोपीनाथ, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, 2010।
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, कस्तूरबा नगर, सिगरा, वाराणसी, 2001
3. वृत्तरत्नाकरः, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।
4. अमरकोश, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, 2011।
5. संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009।

14.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

(1) पशुतुल्य। (2) मनुष्य के रूप में पशु।

(3) विद्यारूपी धन। (4) विद्या को।

(5) वाणी रूपी आभूषण।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें